अन्तर्ध्वनि

मोडर्न प्रिन्टर्स, जयपुर-३

प्रेमचन्द अग्रवाल की प्रकाशित कविताओ पर कुछ प्रतिक्रियाएँ

'चेतना के रग' और 'आस्था क स्वर' के बहाने मैं अनुभवा की रगवती नदी के सामने हूँ। इस बात को यूँ भी कहूँ कि यह नदी ही नाना प्रकार के जैवी-व्यापारा से अटा-पटा अनवरत रूप स ससरणशील जगत है और सारे जैवी व्यापारा म सर्वाधिक चतन मनुष्य भी इसी जगत का अशी है।

इतने सारे रगा का सृष्टा-दृष्टा-भाक्ता होकर भी और अनदिखे रग देखने और उससे उद्वेलित भाषा से उपजती जिज्ञासा से अलग नहीं हो पाता। इस जिज्ञासा और उसकी तीव्रता का उदाहरण है श्री प्रेमचन्द अग्रवाल के ये दो कविता सग्रह।

लगता है श्री अग्रवाल एक ही डोर से बधे जैवी व्यापार से सन्तोष नहीं ले पाते, वे कुछ और खोजना-देखना-करना चाहते हैं। एक बधन मे रहते हुए भी वे बहुत कुछ देखते हैं—सामने बहुत चौडा रास्ता है दोनो और फुटपाथ भी है पर उन्ह शायद सडक के बीच चलना अच्छा लगता हे ताकि कुछ छिल सके, स्वय के छिलाव को देख सके। चलने से पहले वे अपनी चेतना से पूछ भी लेते हें कि "मैं कौन हूँ"। यह प्रश्न उत्तर के लिए उन्हे आगे धकल देता है। आगे की सडक को तो फिर चौडा होना ही है। चलते-चलते मन तूलिका से रच लेते हैं अपना जीवन ससार। अब ससार रचा हे तो उसम 'उडान' होगी, जख्म भी हागे। मन को राने से रोकना भी पडता है। पर प्रेमजी डरे हुए नहीं हैं। इनके इस रूप के साथ देखता हूँ कि उनकी चेतना के रगो ने आस्था के किन स्वरो को अपनाया है। फिर इन स्वरो न अक्षरा क किन-किन युग्मा को लिया है और प्रेमजी को थमा दिया है। स्वरा से सधे ये अक्षर इक्कीसवीं सदी के बीच होर्डिंग के बजाय कोई और उदय देखत हैं। सम्भवत स्वय के वहान अपने बहुवचन को कहन लगते हैं कि इस अटूट सस्कृति को समझने से पहले स्वय को समझो। इस तरह इनका फलक पाठक के सामन अपना व्यापक रूप खोलता है। यहाँ एक उदाहरण ही

पर्याप्त होगा "विभाजन की आग"। यह अर्थ व्यापकता लेता है। इसे समझते हुए मुझे स्व कमलेश्वर के उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' का स्मरण हो आता है। रचनाकर्मी अपने अनुभव के अनुकूल भाषा म चेतावनी देता है। कहीं-कहीं वह अपने देश की राजनीतिक स्थिति पर गहरी चिन्ता प्रकट करता है पर निराश नहीं है।

दोना पुस्तका की भाषा म आधुनिकता आर उत्तर आधुनिका कर भाषा अथवा फैशन का भय भी नहीं है। वह भाषा घडता नहीं खाजता है। इस दृष्टि स ये कविताएँ अपनी अलग पहचान की आर सकेत करती हैं।

डा हरीश भादानी

छबीली घाटी, बीकानेर

प्रेमचन्द अग्रवाल के कविता सग्रह 'चेतना के रग' की कविताआ म कोडे की सजा सस्कार वदलगे इनसे मत डरा, अपन का खा रह हें समाज का बँटवारा, दुनियाँ जिन्दा है नहा चूकता कुएँ मे भाग पडी है, राज अराज हो गया, कहीं आग न सुलग जाये आदि कविताएँ वर्तमान समाज पर कटाक्ष के बतौर लिखी गई हैं। लेकिन अशमात्र हूँ कैसे दिखे वह शप रहा उसका समझो, खोजो मन को, सान्ध्य गगन की लालिमा, ईश्वर के घर म मैंने झाँका है आदि कविताओ मे प्रेमचन्द अग्रवाल ने अपने चेतन्य को प्रत्यक्ष करने का प्रयास किया है। इस सग्रह की सभी कविताएँ कभी बहुर्मुखी हो जाती हैं कभी अन्तर्मुखी। इनमें अनुभवा की झाँकी है। चैतन्य को पूरी तरह से जानन का प्रयास हर युग म आदमी कर रहा है लेकिन चैनन्य निर्गुण हे, निरूपाधिक है, इसलिये चैतन्य की खोज भी अनन्त रहेगी। प्रमचन्द अग्रवाल इस पथ के पथिक हैं ओर अपने शब्दा म व्यक्त और अव्यक्त ससार की अभिव्यक्ति कर रहे हैं। उनके काव्य का हिन्दी ससार म बहुत स्वागत होगा ऐसी मेरी कामना है।

डॉ ताराप्रकाश जोशी, जयपुर

शिल्प की दृष्टि से छन्दयुक्त कविता म लय की समरूपता, गति की प्रवहमानता वाक्य-विन्यास की कसावट सटीक सादृश्य-याजना तथा सुसगत प्रतीक विधान आदि कुछ ऐसी विशेपताएँ हैं जो छन्द मुक्त कविता को शक्तिमत्ता प्रदान करती है। इन विशेपताओ की दृष्टि से कवि प्रेमचन्द अग्रवाल का रचना शिल्प काफी प्रौढ है। प्रेमचन्द अग्रवाल की कविताएँ उनके मौलिक सोच और उनके रचनाधर्मी अभिव्यक्ति कोशल को उजागर करती है। इनकी कविताआ म युगीन कविता क प्रतिमाना की झलक यहाँ वहाँ दिखायी दती ह जा पाठक को युगीन सन्दर्भो से जोडती है और उसे वर्तमान सामाजिक

सास्कृतिक विसगतियो के प्रति सचेत करती है। इनकी अधिकाश कविताआ का विषय कवि का एकान्तिक, अध्यात्म-चिन्तन ही है फिर भी कई कविताआ मे प्रकृति के चित्र, शृगार भाव का प्रकाशन व्यवस्था की विसगति का दर्द बदलते जीवन-मूल्य आर निरन्तर हो रहे ह्रास की पीडा आदि अनेक रग दिखायी पडते हैं जो कवि के काव्य-वैविध्य को बहुविध प्रमाणिक करते हैं।

डॉ अनिल गहलोत, मथुरा

कविता सग्रह 'चतना के रग' पढते हुए मुझ लगातार लगता रहा है कि मै गुरुदेव रवीन्द ठाकुर की गीताञ्जली के किसी सस्मरण का पाठ कर रहा हूँ। कवि के साथ अन्तर्यात्रा मुझे अच्छी लगी। शब्दा म यदा-कदा अभिव्यक्त कवि के अन्तर का उजास मेरे मनोजगत को आलोकित कर गया।

मुझे यह काव्य सकलन कभी-कभी विनय पत्रिका की भी याद दिलाता रहा है। तुलसीदास जी ने तो दवी-देवताओ से प्रार्थना की है लेकिन 'चेतना क रग' का कवि इतना समर्थ है कि वह सीधे उस परम सत्ता से बातचीत करता हे। उसे यह पूर्ण विश्वास है कि उस दिव्य चेतना के साथ तादात्म्य स्थापित करने मे वह सफल होगा। इस सकलन की कविताय पाठको को भी अपने साथ ले जाने मे और दिव्य अनुभूतियो से परिपूर्ण कर अानन्दविभोर करने मे समर्थ है।

डॉ विश्वनाथ मिश्र, लखनऊ

❑❑❑

अपनी ओर से

मैंने कोई कविता नहीं लिखी। यह सब उसी की देन है जो समूचे ब्रह्माण्ड में कण कण मे फैला हुआ हे। बस अन्दर से जब भी आवाज निकलती है, रात के अधेरे मे या दिन के उजाले मे और कहीं भी तब मैं झट लिपिबद्ध करने बेठा जाता हूँ और यत्रवत उसे चद मिनटा मे लिपिबद्ध कर दता हूँ। कविता ता आत्मा का भाषा है अन्तर्मन से निकली आवाज है। मेरे लिये कविता व्यस्तता के बीच का बाई-प्रोडक्ट नहीं हे बल्कि अन्तरात्मा की आवाज है, विवशता है।

कविता अन्त स्थल से निकली जलधारा है जो अपने आप प्रवाहित होती है यह उफनता लावा है जो अपने आप प्रस्फुटित होता है। यह प्रसव वेदना है जो अपने आप जन्म लेती है। इसका बीजारोपण उस असीम की प्रेरणा से हाता है जा अपने आप प्रस्फुटित होती है। यह सब उसकी प्रेरणा और स्फुरण का परिणाम हे। उसी के आशीर्वाद (Grace) से स्वय का विकास व चेतना का विस्तार होता है जिसका परिणाम ऐसा सृजन है। प्रेरणा आती जाती रहती है चाहे अनचाहे विलीन हो जाती है, क्योकि यह ऐसी शक्ति से उद्‌भूत हुई है जो चेतन की अपेक्षा अचेतन अधिक है।

कीट्स ने लिखा है कि "यदि एक चिडिया मेरी खिडकी के सामने आये तो मैं उसकी सत्ता म हिस्सा बँटाता हूँ और उसके साथ ही बाहर कँकरील पथ पर चोच से अनाज चुगने लगता हूँ।" कवि स्वत अपन व्यक्तित्व को स्थगित कर, यथार्थ सत्ता क प्रति आत्म समर्पण कर वस्तु के साथ आत्मलीन हो उसी के जीवन का श्वास लेता और उसी के आकार का आनन्दोपयोग करता है। उसकी लय के साथ लयबद्ध उसके आन्तरिक स्वर और नाद को सुनता है। तभी वह उसकी लय के साथ एकाकार हो उसके भीतर

झाकता है। कीट्स ने लिखा है कि "यदि कविता उसमे वैसे ही स्वाभाविक रूप से प्रस्फुटित नहीं होती जैसे वृक्ष मे कोपले फूटती हैं तो उसका कतई प्रस्फुटित न होना ही अच्छा है।"

अन्र्ध्वनि से निकली ये कविताएँ तो अपने आप प्रस्फुटित हुई और म इन्हे लिपिबद्ध करने का माध्यम बना। वर्ष 2006 मे मैंने 70 बसत पार कर लिये तो सोचा कि यह कविता सग्रह प्रकाशित करा दूँ। यह सब उस असीम का है जो मुझे ऐसा करने को बाध्य कर रहा है। अन्दर से निकली आवाज ने कैसा रूप लिया यह तो आप जाने। पर अपसे यह जरूर अपेक्षा है कि आप उसकी डोर का पकड उस तक पहुँचन का प्रयास कर उससे तारतम्य बैठा लेगे तो उसी के साथ हमेशा लिपटे रहना चाहेगे। आप तब हमेशा आनन्द से सरोबार जो होगे। और ऐसा अधिकाश लोग करने लगे तो चारो तरफ शान्ति व उन्नति आप देखेगे न केवल भारत म ही बल्कि पूरे विश्व मे। इसी कामना के साथ आपके समक्ष ये कविताएँ प्रस्तुत हैं।

डॉ हरिचरण शर्मा पूव एसासिएट प्रोफेसर हिन्दी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय ने मेरी कविताओ को देखकर इनका चयन भी करवाया। वे मरे आत्मीय मित्र हैं, मेरे अपने हैं उनके लिये क्या कहूँ। इसी प्रकार मेरी पत्नी सुषमा व चारों बच्चे व उनके जीवन साथी (मनीषा-रोहित, मोनिका-श्रीनिवास, मनु-मीतुल सुरभि-गोविन्द) व उनके बच्चे (आकाश, अनन्त, ध्रुव, आन्या, अनुष्का, वासु व गौतम) तो अपने ही हैं।

अन्त मे मैं प्रकाशक व उन सबका आभारी हूँ जिनक सहयाग से य कवितायें आपके समक्ष आ सकीं।

14 जनवरी 2007

जयपुर

अनुक्रमणिका

❑❑❑

1. नवचेतना

विषादो
अवसादों की
दुनियाँ में
चलना
सभल-सभल कर
कहीं
कुम्हला न जाओ
बुझ न जाओ।
सूनी सूनी
राहों मे
देखों
घनघोर
बादलों की काली घटाएँ
जो देती अहसास
आने वाले
युग की
बोछारों की
नई घास की
रोशनी की
प्रस्फुटित होते
नए अकुरों की
लहलहाती

रग-बिरगी
फूलो-फलो से
लदी
लताआ की
आसमान की
ऊँचाई
को छूती
मानव की
नवचेतना की
पहुँच जाने
दूर
क्षितिज-आकाश मे
ब्रह्माण्ड के
उस पार ढूँढने
अदृश्य को
जो छिपा बैठा है
उसके अदर ही।

❑❑❑

2. तुम भी अब जागो

मन की उत्कठाओ के
द्वारों को
मैंने खोल खोल कर
झाँका है
तन की आकाक्षाओ के
इशारो को
मैंने देख देख कर
भाँपा है
मैं फिर भी रहा
मूढ का मूढ।
तन जाग रहा अपने में
डूब रहा
इस नश्वर जीवन के
मोह पाश में
भोग रहा
अपने को
दौड रहा
खाने की चाह मे
अपनी लालसा में।
मन भी झाक रहा
बाहर नर ककाल से

अपनी गाथाओ मे
बीती आशाओ मे
भविष्य के उजाले
सपनो मे
जुडे अपने भोग विलास से
पर देख नहीं रहा
अपने अन्दर
अतर्तम मे
दिव्य प्रकाश को
और न महसूस कर रहा
अपने सृजन कर्त्ता को
जिसका वह अश है।
तुम भी अब जागो
भगाओ अपने को दूर
इस मिथ्या जीवन से
और हो जाओ एकाकार
अपने मन से
अपने तन से
उससे
जो निराकार है
पारपार है
सब ओर सर्वत्र है।

□□□

3. ठहर गया समय

अतर्मन के अन्तर्तम मे
छिपा बैठा चित्त-चोर
तम के अधेरे मे
लिप्त अदृश्य प्रकाश में
भूल गया मैं राह
पर पा नहीं सका उसका छोर।
मन के उद्गारों को
किसने देखा,
किसने समझा है
अतर्तम के अधियारे की
गलियो मे
किसने झाँका
किसने भाँपा है
मन के उजाले मे
किसने निहारा
किसने देखा है।
भुला दिया है मैंने
अपने को
भूल चुका मैं
अपने प्रियतम को
चित्त-चोर को।
प्रकाश भी समा चुका

तम मे
ओर तम भी प्रकाश मे
दोनो हो गए एक
मिट गया सब कुछ
तम भी, प्रकाश भी
अज्ञान भी, ज्ञान भी
स्थिर हो गया जीवन
ठहर गया समय
देख रहा तम व प्रकाश को
साथ-साथ
मिलाये हाथ मे हाथ
कर रहा दिव्य का अनुभव
भव्य प्रकाश का,
गहन तम का
छिप गया उसमे
समा गया
अपने सृजन कर्त्ता मे
जिसने रचा था उसे
इस सृष्टि को
देख रहा था मैं
अपना प्रारम्भ
पर अभी तो मैं ठहरा था
फिर चल पडूँगा मैं
उसके इशारे पर
पहुँच जाने
अपनी मजिल की ओर
पाने उसका छोर।

□□□

4. मन: क्रान्ति

फँस जाता है प्राणी
जीवन की ललक में
परिवार की चहक मे
भूल जाता है उसे
उस काति की चमक को
नहीं सूँघ पाता उसकी महक को
जो सर्वत्र व्याप्त है
उसके मन मे
उसके तन मे
चहुँ ओर प्रकृति मे
परवश खिचा चला जाता है
चक्की के पाटो मे पिसता जाता है।
भूल जा अपने को
पर उसे नहीं
ला क्राति अपने मन मे
अपने जीवन मे
फिर देख चमत्कार
उसके ध्यान का, मनन का
आत्म-चिन्तन का
चारो ओर हरियाली ही हरियाली
नजर आयेगी
जीवन भी खुशी से

सरोबार हो जायेगा
उसके चिन्तन में ही
फिर होगी अमिट आनन्द की
अनुभूति
और हो जाएगा
मन ओतप्रोत
समा जाने को उसमें।

□□□

5 उद्वेलन

किट किट करते मेरे दात
बता रहे मोसम की तीव्रता
कराहते मेरे जोड
बता रहे मौसम मे नमी की बाहुलता।
पता नहीं कब मैं जाग कर
बैठ गया बाहर निहारने अद्‌भुत छटा को
सुबह की बर्फीली हवा को
जो सन सन कर बहती
चीरती मेरे शरीर को
अहसास कराती अपना
और मेरे हाड माँस की
कठपुतली की
अदर के जर्जर नरककाल को
समय की वेदना को
धवल केश के अनुभवो को
बीते दिनो के सुनहले सपनो को
जिन्हे मैंने जिया था
अतीत की उन चहचहाती यादो को
जब मैं अपनी बाँहो मे उसे समेट
गर्मी का अहसास करता था।
ये ठडी हवाए तब मुझे
कितनी सुहानी लगती थी

में रात भर इनका
इतजार करता था
आलिगन पाश मे बँधने के लिए।
पर मैं अब अकेला गमगीन
अँधेरे म दूर से निहारता
उसकी आकृति को
जो दूर से इशारा कर रही है
पास आ दूर से मुझे सहारा दे रही है
पर में उससे कैसे बाँध सकता हूँ
कैसे लिपट सकता हूँ
वह तो अशरीरी है
आत्मा जो ठहरी
यह तो उसका मोह है
जो उसे मेरे पास
खींच लाता है
मुझे सहारा देने के लिए
नहीं तो मैं पता नहीं
कब खुले आकाश के नीचे
पडा पडा
बर्फ की बोछारो के नीचे
चट्टान बन जाता
मुझे होश कहाँ रहा है
उससे, उसके बिछुडने पर।

□□□

6. सेवा ही करनी है

मन की कुठाएँ
तन की आकाक्षाएँ
न जाने मुझे किस छोर
ले जायेगी ?
मन की आशाएँ
मन का धीरज
मेरा सहारा बना
पर आशा तो आशा है
न जाने कब मुझे कहाँ ले जाये ?
मन का सबल, तन का कपन
क्यो मुझे झकझोरता है ?
तन की तपन
मन की लगन
न जाने मुझे कहाँ ले जाये ?
मैं तो निर्बल प्राणी हूँ
तू ही आशा का सचारक हे।
में तेरा हूँ तू मेरा है
में कहाँ किस नीड मे बसेरा डालूँ ?
मैं रोता हूँ तो तू हँसता है,
मैं सेवक हूँ तू मालिक है
तू चाहे जो कर सकता है
पर मुझको तो सेवा ही करनी है।

❑❑❑

7. समय गतिशील है

मैंने देखते ही अपने मीत को पा लिया
सोचा मुझे सब कुछ मिल गया
जो मैंने चाहा था
मेरा मीत जो सदा मेरे साथ होगा
मुझे अपना लेगा और हम एक हो जायेंगे
नए जीवन की शुरुआत करने के लिए
नए पुष्प को अकुरित-पल्लवित करने के लिए।
सच हुए मेरे सपने
मैं आज बहुत खुश हूँ
हम दोनो ही खुश है प्रतीक्षा में उसकी
जिसे ईश्वर ने हमे दिया है
और जो प्रगट होने वाला है
इस ससार मे
अपनी नई शुरुआत करने के लिए।
और देखते ही देखते पौधा वृक्ष बन गया
सक्षम-हो गया नए पुष्प को अकुरित करने मे
समय कितना गतिशील है
जब निकल जाता है
तभी उसका आभास होता है
बच्चा जवान फिर वृद्ध होता है
नए जीवन चक्र को देखते-देखते।
समय का पता नहीं लगे चलते-चलते

यही तो लक्ष्य होना चाहिए
तभी तो तुम खुश रह सकते हो
और चले जाने पर तुम्हे
उसका आभास होगा।
यह सब तुम्हारी मानसिक स्थिति है
तुम कैसे इस जीवन चक्र को लेते हो
जिस पर तुम्हारा क्या नियत्रण ?
ध्यान धरो उसका जो तुम्हे घुमाता है
अपने जाल मे
और तुम घूमते रहते हो उसके पीछे।
निश्चल मन हो
सच्चे इन्सान हो
तो वह तुम्हारे साथ है
तुम्हारा सखा है
तुम्हे मार्गदर्शन देगा
तुम उसका ध्यान करो
तो तुम्हे दर्शन भी देगा।
झूँठी माया को छोडो
इससे मुँह मोडो
और अपना लो उसको
वही तुम्हारा सहारा है।
तुम अकेले आए थे
और अकेले जाओगे
यही जीवन का सत्य है।

8 धुरी पर घूमता इंसान

दिल धडकता है
मन तडपता है
बुद्धि भूल जाती है
भुला-रुला देती है
अपनो को।
तन तरस जाता है
सासे गिन गिन कर
रुक-रुक कर
आती हैं
नयन पीछे छिप जाते हैं
होठ चिपक जाते हैं
मुँह मे पोल-पोल हो जाती है
श्वेत धवल लटाएँ
लिपटी पिचके चेहरे से
देती है आभास
पुरानी बुलद इमारत का।
सब समय-चक्र है
जीवन-चक्र है।
धुरी पर घूमता इन्सान
देखता गिरती इमारतें
पर फिर भी नहीं समझता
अपने को

अपनो के लिए ही सही।
नहीं तो फिर क्यो
खटखटाता दरवाजे
आश्रमो के।
सहनशीलता ही
सहज जीवन की
निशानी है
पर दुर्लभ है
सोच का ही फरक है
पीढी दर पीढी
आगे बढती है
पर नई पीढी को तो
पूरा रास्ता तय करना है
सामजस्य तो
पुरानी पीढी को ही करना है
जिसे अब थोडी दूर और जाना है।
पर समझ तो दोनो को ही चाहिए
जब तक साथ-साथ चलना है।
दायित्व तुम्हारा ही था
अपने लाडलों को एक सीमा तक
विकसित करना
तुम चूक गए तो
दोष किसे देते हो।
फिर भी अब
देखो जीवन को
और जियो उसे
सहज भाव से
निर्मल मन से।

❑❑❑

9. गंगाजल की महक

मन की गाँठो को
खोल खोल कर
फूलो की सेज
सजाई है
तन की सासो से
सास मिला मिला
मन को कडुवाहट मिटाई है।
बीते दिनो की
दु खद याद से
वर्तमान को
सुखद बनाया है।
पावन सरिता के
स्वच्छ जल से
नहा नहा कर
मील के पत्थर की
नींव भराई हे।
नई इमारत को
बुलन्द बनाने
सडाध को
मिटा मिटा
गगाजल की

(सच्चे भावो की)
महक
चहुँ ओर
फैलाई है।
दूर के चाँद को
अपनी झोली मे
डाल
सदैव रोशनी की
लाली से
ओत प्रोत हो
सबकी गरिमा
बढाई है।
थके हारे ने भी
दूर अदृश्य से
प्रेरणा पा
अपने अदर
झाक
सुखद भविष्य की
लाली से
ओत प्रोत हो
अद्भुत छटा निहारी है।

❑❑❑

10 कर्मफल

मन की स्मृतियो को
कुरेद कुरेद
मेंने बनाया
यह पहाड
यह जगल
कटीला
उजाड
सूना सूना
वीराना
दर्द भरा।
तन की विस्मृतियो का
रोद रोद
पीछे छोड
मैंने बनाया
यह कीचड-सना
बदबू देता
रक्त रजित
घायल करता
पीडा देता
फोडा
जो पूरे शरीर में

विष फैलाता
मुझे निगलने को
आतुर है।
पर मैं होता हूँ
कौन ?
तेरे कर्म ही तो
अपने मे
जकडे हुए
तुझे
पीछे
ढकेल रहे हैं
इसी योनि मे
परिणाम भुगतने को
बाध्य कर रहे हैं
तेरे अच्छे कर्मों के
कारण
नहीं तो फिर
सडता रहता
अगली योनि मे
और
चरता रहता
कूडे से
विष्ठा।

11. किसको डसने वाली है

केशो को बिखेर
नयनो मे बदली लिए
झर झर करती
यह बाला
विष हाला
किसको डसने वाली है ?
मस्त मतवाली हो
घूम घूम
नाच नाच
अपने को उभार उभार
उलट-उलट कर
किस पर
गिरने वाली है ?
वह इधर आ रही हे
मेरी कपकपी
छूट रही है
मन घवरा रहा हे
कहीं वह
मुझे ही नहीं डसले
अपना बनाने को
चद समय के लिए ही सही
क्योंकि मैं तो पहिले से ही

किसी का हो चुका हूँ
और मेरा भरा पूरा
परिवार है।
तो फिर तुम यहाँ
क्यो आये
केवल मजा करने के लिए ?
नहीं उन भेडियो को
देखने के लिए
जो समाज को
यह अभिशाप दे रहे हैं
उसे और ऐसी बालाओ को
खोखला कर रहे हैं
और समाज मे सम्मानित नागरिक का
राष्ट्रपति से
अवार्ड भी ले रहे हे।
मैं तो पत्रकार हूँ
और उसने शायद
मुझे भेडियो की जमात का ही
समझ लिया।

❑❑❑

12. प्रियतम कहाँ गए ?

भोर भई या साँझ हुई
विरह की लाली जगमगा उठी।
मेरा मन अदर से नारियल जैसा
कैसे हो गया यह तप तप कर
तवे सा ?
मेरे नयन झर झर कर बह रहे
आँसू तप तप कर उड रहे
अपने प्रिय से मिलन को।
मन मे टीस है तन मे तपन है
हवा भी चल पडी गरम होकर
देने सदेशा मेरे प्रिय को।
पर न जाने मेरे प्रियतम कहाँ चले गए
मुझे यहाँ अकेला क्यो छोड गए ?
मैं तो प्रिय की दीवानी
नाच नाच कर भी रो रही हूँ
पर सदेशे के बाद भी प्रियतम
नहीं आ रहे
मेरे प्रियतम ने
क्या और कहीं बसेरा डाल दिया

मुझे अकेला छोड मुझे भुला दिया ?
तो मैं फिर सौतन को
नोच नोच खा जाऊँगी
और अपने प्रियतम पर भी
ओलो की वर्षा कर
उसे बरफ मे दबा दूँगी
और फिर मैं भी उसी मे
समा जाऊँगी।

❑❑❑

13. बिजली सी गिरने वाली है

नयनो मे लिए अगारे
बिजली सी इठलाती
किसे भस्म करने को आतुर है
यह चद्रिका।
किसने इसे दिया यह आक्रोश
यह उत्पीडन ?
किसने चूस चूस कर रस पी पी
छोड दिया इसे
अदर की अग्नि मे
इस सूखी लता को
जलने के लिए।
पर यह अग्नि को
नयनो मे सजोये
अगारे लिए
बिजली सी दमकती
गिरने वाली है
भस्म करने के लिए
इन दरिन्दो को
इस समाज के चाटुकारो को
कुर्सी स चिपके कीडा को
जिन्हाने द्रोपदी पर किये

अत्याचार को भी
पीछे छोड दिया।
कृष्ण नहीं सही
द्रोपदी की लाज तो लुट गई
पर वह और द्रोपदियो को
नहीं लुटने देगी
उन्हे भस्म नहीं होने देगी
खुद भी नहीं डूबेगी
बल्कि अपना बदला ले
कौरवो को जला
भस्म कर देगी।
फिर न कौरव होगा
और न ही होगा कोई रावण
राम राज्य होगा
जिसमे अबला अकेली भी
खुले आकाश मे
चादनी मे
विचरण करती
मद्मस्त हो सकेगी।

❑❑❑

14. वह तो जिंदा है

अग्नि की लपटो मे
सिमटी
उसकी काया
धूँ धूँ कर जलती
मैंने देखी है
दूर बैठे निहारता रहा
अग्नि की
धुँए की
लौ को
सोचता रहा
मित्र के अतर्मन से
निकले
स्वरो को
कि 'मुझे कधा
मत देना'
पर मैं तो कधा
लगा चुका था
पर तूने कधा दिया किसे
उसके निर्जीव शरीर को
न कि उस मित्र को,
उसके प्राण पखेरू
उड़ जा गए थे।

'उत्सव लाल' तो
मर चुका था
उसमे से
निकल चुका था
और उसका नश्वर शरीर ही
धूँ धूँ जल रहा था।
दूर बैठा मैं उसे
याद करता
मत्र जपता
उससे
उसकी आत्मा से
तारतम्य बना रहा था
तार से तार
मिला रहा था।
अनुभूत कर रहा था
उसे अपने पास
बतला रहा था
उससे
वह उड दूर
कहाँ जा सकता है
मुझसे
उसका नश्वर शरीर
ही तो
मिटकर
राख हुआ हे
वह तो जिदा है
आत्मा तो अमर है।

❑❑❑

15 तीन पाँच छ·

देखो नेता को
केसे लाघ जाता है मर्यादा
जब देखता अपना फायदा।
किसी को करने नौ दो ग्यारह,
करता है उपयोग 'तीन पाँच छ ' का
चाहे सरकार चुनी हुई हो
ओर पा लिया सदन का विश्वास हो।
करना तो है ही उसे तीन दो पाँच
अपने धडे को जिससे नहीं आए आँच
रहे सुरक्षित अपनी सरकार
जनता के भले की नहीं रही
अब कोई दरकार
उल्लू सीधा जो करना है।
पर यह क्या हो गया
पासा पलट गया
राष्ट्र का रखवाला
बन गया तारणहार
और कर दिया
'तीन पाँच छ ' की सिफारिश को
दरकरार
लौटा दिया उन्हीं राजनेता के

सरकार के
पाले मे।
अब तो साथी दल भी
काटने दौडे
और फिर क्या था
हो गया सब मटियामेट
पुत गई कालिख
हो गया खतम खेल।
फिर न रहा जोश
आ गया होश
दुबारा नहीं भेजी सिफारिश
'तीन पॉच छ ' करने की
पर कहा कि
बिहार मे नहीं है छूट
विहार करने की
चरमरा रही हे कानून व्यवस्था।
कुछ भी कहो
शीशे मे अपना मुॅह
तो देखो
याद करो
अपना अनशन
जब एक राज्यपाल ने
उपयोग किया था
'तीन पाँच छ ' का
आर फिर उन्हीं
दलबदलुओ ने
पलट लिया था
पाला अपना।

समय अतराल से
आया नया जोश
ओर फिर
कर दी बरखास्त
उसी चुनी सरकार को
ओर पुष्टि करा ली
लोक सभा मे।
पर यह क्या ?
डर कर राज्य सभा से
ले लिए पीछे
अपने कदम
वापिस ले लिया अध्यादेश
जिससे की थी
बर्खास्त चुनी सरकार को।
फिर क्या था
वापिस हो गया
राज उसी का
जिसे कहते थे अराजकता।
कुछ भी कहो
जीत हुई प्रजातत्र की।

❑❑❑

16. बंटाधार

देखो
ससदीय प्रणाली को
कैसे कर दिया
विपक्ष ने
प्रजातत्र का
बटाधार
चलने नहीं दी
ससद
और पहुँच गए
देने अपनी प्रतिक्रिया
बजट पर
प्रधानमत्री के
पास
जबकि कैसे सुनेगे वे
जब चल रही ससद।
अरे कुछ तो
रखो मर्यादा
और होने दो बहस
ससद में
सभी मुद्दों पर।
नहीं नहीं
ये सब राजनेता तो

मोहरें हैं
उनमे
जो हैं चार्जशीटेड
या थे चार्जशीटेड
मर्डर मे या बम विस्फोट मे
या दगे फैलाने मे
या ओर कोई
जघन्य अपराध करने मे
पर आज हवा खा रहे
केस जो वापिस ले लिए
उनकी सरकार आने पर।
कुछ तो शर्म रखो
ऐसे भले प्रधानमत्री पर
क्यो कीचड उछालते हो
मन मोहन तो
मोहक है
करता केवल न्याय
और सोचता
आम आदमी की
पर करे क्या
ऐसे भ्रष्टाचारी
आरोपी सासदा के बीच।
अरे दे दो
इस देश को
राष्ट्रपति प्रणाली
या फिर दे दो
इस देश को
मनमोहन जैसा

एक तानाशाह
तभी सुधरेगा
यह देश
नहीं तो बिखर कर
हो जायेंगे
इसके टुकडे-टुकडे
बन बैठे जो
हर कोने मे
क्षेत्रीय क्षत्रप
जो आए राजनीति मे
मसल पावर से
और दिखा रहे
अपनी
ओछी हरकते।

❑❑❑

17. टनटनाती देह

क्लीन टनटनाती देह को देखो
ले वश की दुहाई
अब मौन इका छोड
मौन तोड
अपने छिपने मे लगा है।
अपनो के साथ ही ढूँढ रहा
उस स्नेह को,
उस प्रेम को
जिसे उसने गवाया
अपने ही गरूर में
जब भूल गया अपने को
उसकी बाँहो मे
कामिनी की कोमलता से लिपटे
सोमरस को होठों मे उँडेले
अर्द्धनग्न चिराग्नि मे डूबा
उसको निचोडने मे।
सोचा भी न था
मानव इस पराकाष्ठा में
पहुँच जायेगा
अपने को गिरा देगा
इस कीचड में

जिसमें वह कमल खिला था
और कीचड कीचड न थी
उसने तो अब बना दिया
अमृत को भी कीचड
घिनोने बुदबुदाते करतूतों से
जिसका समाज अनुसरण करती है।
पर मानव तो अब परिपक्व हो गया
कैसे बर्दाश्त करेगा
वह तो उसके सिर पर
चढकर
कीले ठोक ठोक कर
दफन कर देगा
उन करतूतो को
ऐसे दागदार पाखडियो को
जो नीचे से पनप कर
राष्ट्र में उच्च स्थान पाकर भी
नाली के कीडे की तरह
फिर नाली मे ही
रहने लायक हैं।
उच्च पद पर होने से
क्या कीडे का
विकास हुआ है
क्या उसकी आत्मा ने
उन्नति की है
क्या आत्मा परिपक्व हुई है ?
नहीं,
यह तो असुर की आत्मा है
जो अमृत पान कर

भागकर
इस धरती पर
जन्म लेकर आ गई
और अमर होने के लिए
उच्च पद पर
आसीन हो गई।
पर पद से अमरत्व का
क्या वास्ता ?
यह तो असुर को
क्या पता ?
जब देह का अत होगा
तब आत्मा भटकती
भटकती
पहुँच जायेगी
अपने असुरो के
समाज मे।
नहीं,
वह तो बडा है
परमात्मा है
माफ कर देगा
रावण को भी तो
माफ कर
समा लिया था
उसने
अपने मे।

18. अद्भुत संगम

सरस्वती लक्ष्मी का
अद्भुत सगम
हो गया साकार
सस्कारो का परिष्कार
बन गया आधार।
पर तुम भूल न जाना
जीवन शैली के
उन सुनहले पन्नों को
उन आस्थाओं को
उन सिद्धान्तों को
उन मर्यादाओं को
ऊँची इमारत की
नींव के
उन चेतन वाशिदों को
अपना जीवन
सत्य, मर्यादा, दया, अहिंसा में
होम करने वाले
उन बुजुर्गों को
पल पल अभाव मे
आनदित हो जीने वाले

अपनो पर ही नहीं
सभी पर, गरीबो पर
अपना सब कुछ
न्यौछावर करने वाले
उन साहसी धीरजवालो को
विषम परिस्थिति में भी
विवेक से ओतप्रोत रह
सही रास्ता बनाते
आगे बढने वाले बुद्धिजीवी
धर्मपरायण, सहनशील, धीर
सत्य-प्रेमियो को
जो ईमानदारी के पथ पर
दृढ रह खेते रहे
जीवन नौका को
इस ऊँचाई तक
जहाँ से तुम
'टेक ऑफ' कर सके और
सरस्वती लक्ष्मी का
हो गया मिलन।
तुम्ह भी तो इसे
आगे बढाने के लिए
देनी होगी आहुति
गरीबो का
दु ख दर्द दूर करने के लिए
समाज की कँटीली झाडियो को
दूर फेंकने के लिए।

तुम्हारे कर्म ही तो
परिष्कृत करेंगे और
तुम्हारी आत्मा को।
क्षणभगुर जीवन को
भूल
करो दूसरों का दर्द
दूर
ध्यान कर उसका
जिसने पहुँचाया तुम्हें
इस ऊँचाई पर
और ले लो
आनन्द ही आनन्द।

❑❑❑

19. हमारा ध्रुव

सितारो मे चमका
आसमान से उतरा
हमारा नींव का पत्थर
सजीव हो
चिल्ला उठा
इस नई दुनियाँ मे।
हम सोते हैं
जागते हैं
घूमते हैं
'ध्रुव' की
धुरी पर।
वही
प्रकाशित कर
प्रफुल्लित करता है
हमे
अन्तर्मन से
चिपट हमसे
जागृत
कर देता है
अन्त करण को
सोचने को

मजबूर करता है
उसकी अपार लीला को
और हम
आनन्द से ओतप्रोत हो
डूब जाते हैं
उसमे जो छिपा बैठा
घुमा रहा
अपनी डोर से।

❑❑❑

20. मेरी छाया

मेरी छाया
मेरी परछाई बनी
मेरे साथ-साथ घूमती है
न जाने क्यो ?
मैं जिधर भी जाता हूँ
उधर वह मेरा पीछा करती है
मेरे मन को उद्वेलित करती है
मन की परता को
खोल खोल कर
मेरे सामने फैला देती है
जिन्हे मैं देखता हूँ।
कभी वह मुझे रुला देती है
कभी हँसा देती है
मेरा मजाक भी उडाती है।
मेरा ही तो प्रतिबिम्ब है वह
मुझे अहसास कराती है
मेरे अन्दर के
उन विचारों का
उन सस्कारो का

मेरे अन्दर की तडपन का
टीस का
सब कुछ मुझ का
जो मैं हूँ
जिससे मेरे अन्दर का
ताना बाना बुना हुआ है
पर मेरे शरीर का नहीं
जिसकी वह छाया है।

❑❑❑

21. अचानक न आ जाये

कर रहा प्रतीक्षा तेरी कब से
गई है तू जब से
अपने घर से
अपनो के पास।
पर मैं भी तो हो गया था
अपनो से भी अधिक अपना
तेरा घरवाला
मतवाला।
नहीं होता सहन अब यह
अकेलापन
इस एकान्त सूने घर मे।
लगता है सब सूना-सूना
तन भी सूना
मन भी सूना
सूना हो गया ससार
अब तो घर भी हो गया
दीवारो का ककाल।
पर तन शान्त है
मन शान्त है
होता नहीं कोई क्रन्दन।
आहट सुनते ही

दौड पडता हूँ दरवाजे की ओर
कहीं मेरी प्रिया अचानक
न आ जाये इस ओर।
मैंने तुझे क्या कहा था ऐसा
जो दौड पडी तू अपनो के पास
(मैं भी तो मेरा अपना हो गया था)।
पर मुझे है अब भी आस
आयेगी जरूर तू मेरे पास–
मेरा मन तेरा है, मैं तेरा हूँ।
तू चाहे जो कर
आ जा अपने घर
अब नहीं कहूँगा तुझे कुछ भी
केवल दूँगा तुझे
पहिले जैसा
ढेर सारा प्यार।
बना दे इस ककाल को
फिर घर
बसा दे मुझे
और अपने को भी
कर दे साकार
देकर नया आकार
नए बीज का रोपण
पोषण कर
अपना बिम्ब
और मेरा भी।

जिन्होंने
तुम्हें दिया
यह दर्द ?
भूलना है तो
छोडो यह पीना
देखो राम के नाम को
पी पीकर
घूँट घूँट
चख स्वाद उसका
फिर देखना
अपने अन्दर
गम न होगा
दर्द न होगा
केवल उसका
नाम होगा
और वह होगा
देता तुम्हे
सुख और
आनन्द।

23 वे क्या गये

वे क्या गये
बिखर गया मेरा ससार।
चुन चुन कर
सजोये थे सपने मैंने
बाध-बाध कर
रखा था अपने को
जब पडे थे वे
सुसुप्त अर्द्धनग्न
ग्रसित रोग से
तूने ही तब
दिया मुझे सहारा।
बडी मुश्किल से
रोक पाइ थी मैं अपने को
नयनों में सजोये थे
अपने आँसू
सास भी मेरी
रुक जाती थी
जब वे हो जाते थे अचेत।
पर अब कुछ ऐसा हो गया
[illegible], नहीं है
[illegible] भरे नयनों से

पर तू दूर खडा देखता
हँसता है
मैं अपने मन को
जो बाध कर नहीं रख पाई
जब से वे गए हैं तेरे पास।
मै तो अब उनकी याद मे
तेरी नहीं
डूब जाऊँगी मन सागर मे
तू सहारा नहीं देगा तो
भुला दूँगी, रुला दूँगी तुझे
और तू भूल जायेगा
यह हँसना।
मैं तो उनकी थी
और तेरी भी बन गई थी
पर तू तो निष्ठुर निकला
मेरे मन से भी ओझल हो गया
और मुझे अकेला छोड गया।
मैं तो तेरी मीरा सी दीवानी थी
रोम रोम तुझे चाहती थी।
अब भी समय हे
आ जा
नहीं तो मैं जा मिलूँगी
उनसे अपने पिया से
और तू देखता ही
रह जायेगा।

❑❑❑

24. मन के अंधियारे में

साध्य गगन की
लालिमा देख
मेरा मन
बार बार
क्यूँ रोया ?
गर्भ के अधेरे मे
तूने ऐसा
क्या बीज बोया ?
तम के अधेरे मे
यम दौड
पहुँच रहा निगलने को ?
तो फिर
रह जायेगे
मेरे सपने
ऐसे ही
सजोये सजोये
तभी तो मैं
रो रहा ऐसे
खोये खोये।
इस दुनियाँ के
सपनों को
सपने ही

रहने दो
पर
मन के अधियारे मे
डूबने दो
मुझे
रम जाने दो
उसमे
और
एक हो जाने दो
उस अधियारे मे।
बन जाने दो
इस शरीर को
फिर लोथडा
और रम जाने दो
मुझे
सप्राण
हो निष्प्राण
उस अनन्त मे
चिर निद्रा मे

25 प्राण-बीज

मत कर
इतना मोह
इस काया से
जग-माया से
छाया से।
सोचो
समझो
लीला को
खोजो
लीलाकर्ता को
देखो
इस साया को
सचरित माया को
अपने अन्दर के
मुखरित
प्राण-बीज को
रोम रोम मे
समाहित
अन्तर्चेतना को
फिर हो जाओ
ओतप्रोत
नहा नहा कर

भीनी भीनी
फुआरो मे
भीग भीग
लीला के
अकुर मे
प्रस्फुटित
अलौकिक
दिव्य दृश्य से
और समा जाओ
लीलाकर्ता मे
पाने
उसके छोर को
सर्वानन्द को।

26. झाँको अपने अन्दर

विश्वासो की नगरी मे
हमने धोखा खाया है
कहते जिन्हे अपना था
हो गये वे दूर
हमारे से।
भूल गये सब कुछ
याद न रखा
उन बचपन की
गलियारो को
डूब गये जो
धन लोलुप मे
भूल पुरानी यादो को
सिमट अपने तत्र मे
मोह माया के जाल मे
दूर कर अपनो को
अपने से
बसा अपना नया ससार
नये वर्ग का
बैठ ऊँचे आसन पर
धिक्कार उन सबको
जिन्होने समझ बैठा था

इन्हे अपना
खून के रिश्ते से
सगे भाई बहन
जो ठहरे।
अरे! मत कोसो उनको
झाँको अपने अन्दर
डूब उस असीम मे
जो छिपा बैठा
तुम्हारे अन्दर,
सबके अन्दर।
तभी तुम
कर पाओगे
भला दूसरो का भी
दीन दु खियो का भी
न कि केवल
अपने खून के रिश्ते का
नहीं तो डूब
अपने में
कर दोगे
सब कुछ स्वाहा
इसी जीवन मे।

❑❑❑

27 डुबो दो उसे

मन का मटका
फोडकर
खेल रे होली
सग कान्हा
तन का तिनका
तोडकर
खेल रे होली
सग कान्हा।
डुबो दो उसे
उसके रगो मे
और खुद भी डूबो
उसके रग मे
फिर देखो
उसके सतरगी धनुष को
और भेद दो उसको
उसके ही बाणो से
ले नाम उसका
अन्तर्तम से
जहाँ छिपा बैठा वह
तुम्हारे अन्दर
सबके अन्दर।

28 कल फिर आएगा

कल कल था
कल फिर आएगा
हर रोज आता है कल
रोज बुलाता है मुझे
पर मैं नहीं जाता
उसके साथ
पर कल में
उसे पकड
बिठा लूँगा
अपने पास
फिर कहाँ जा सकता है
वह
मर जायेगा
यहीं पर
फिर क्या मैं भी
मर जाऊँगा
नहीं, कभी नहीं
तुम तो शाश्वत हो
उस कल का ही तो
अश हो

वह तो
पूरे ब्रह्माण्ड मे
फैला है
अनन्त असीम है
वह मरा थोडे ही है
तुम उसमे समा गये
तो तुमने मान लिया कि
वह मर गया
तुम जो फैल गये
उसके साथ ही
पूरे ब्रह्माण्ड मे
वह तो समयातीत है
और तुम उसे
समझ बैठे
समय का अश, कल
माया जाल मे
फँस गये थे
जो तुम।
अरे भूलो
अपने को
देखो अपने अन्दर
पहचानो उसे
और मिल
एक हो जाओ
उसके साथ
जो छिपा बैठा है

तुम्हारे अन्दर
सबके अन्दर
वह चितचोर
अनादि अनन्त
और उसी के
भ्रमजाल में तो
तुम समझ बैठे थे
उसे कल
समय का कल।

29. भूल गए तुम

भूल गए तुम
भुला न पाये हम
बिलख बिलख कर
रो पडे।
रह गए
खडे के खडे।
पर तुम तो
निष्ठुर हो
निराकार निर्गुणी
देखते रहे
छिपकर
अन्दर ही अन्दर
पर बोले नहीं
और न ही किया इशारा
तडफाते रहे मुझे
अन्दर की टीस
चुभाती रही
रक्त रंजित हो
निकल पडे
फफोले
बनकर चिनगारी
तडफाते मुझे

पर मैं तो
कराह भी
नहीं सकता
गमगीन हो
पडा शैया पर
पर तुम तो
हो गए बहरे
मेरी चीख भी
नहीं सुन सकते
चाहे मैं अन्दर ही अन्दर
कितना ही पुकारुँ तुझे।
पर ठहर
तुझे पकड
दे दूँगा
ये फफोले
तडफाने तुझे
फिर तू भी तो
तडफेगा मेरे साथ
तुझे रुला दूँगा
फिर तू
कैसे रह सकेगा
छिपा मेरे अन्दर
निकाल बाहर
फेक दूँगा
खुले आसमान मे
फिर तू भी
ढूँढता रहेगा
अपनी ठोर

छिपने के लिए।
अरे नहीं
मैं तेरा
क्या कर सकता हूँ
तू तो
मर्जी का मालिक है
माफ कर मुझे
बुला ले
अपने पास
हे चित्त चोर
छिपा जो बैठा
मेरे अन्दर
सबके अन्दर।

30. परखो अपने को

जीवन
जीने के लिए है
मृत्यु
नवजीवन का सचार
अपना लो
उस अजनबी को
फिर समझो
अपना उसका आधार
परखो
अपने को
और घुल मिल
एक हो जाओ
उससे
जैसे प्रवाहित होती
नदी
सागर की ओर
मिलने
अपने जन्मदाता से।
तुम भी तो
उसी का अश हो
फिर क्यो डरते हो
उससे

रुला दो उसे
ले नाम बार बार उसका
फिर केसे
रुक सकता हे वह
झट प्रगट हो
उठा लेगा तुझे
अपनी गोदी मे
और समा लेगा
अपने मे
छिपा बैठा है जो
तुम्हारे अन्दर
सबके अन्दर।

❑❑❑

31 समा जाओ

मन की पीडा
किसने देखी
किसने जानी है
साँसो की सुरसुराहट
किसने परखी
किसने आँकी है
इस दुनिया के
गड्ढो को
किसने पहचाना
किसने भरा है
इन रोते
भूखे नगो को
किसने सहलाया
किसने गरमाया है
यह दुनिया तो
बस अपनी अपनी है
जो खुद को ही
देखती पहचानती हे
मत कर इनसे
इतना मोह
डूब जा उसमे
जो छिपा बैठा है

तुम्हारे अन्दर
सबके अन्दर
फिर देख
उसका इशारा
जो तुम्हे देगा
हिम्मत और आत्म-विश्वास
दिखायेगा तुम्हे रास्ता
दूर करने दु ख इनका
और मिटा देने
अपने गमो को
जो सरोबार हो जाओ तुम
अपने मन मे
डुबो उसे
आनन्द के परावार मे
जहाँ से फिर
निकल न सको
ओर समा जाओ उस असीम मे
एक रस हो
उसके साथ।

❑❑❑

32. मिल गये

मैं चित्रवत
उसे देख रहा था
पर वह
अपने मे मस्त
फुहारो के नीचे
नहा रही थी
पानी की धारा
उसके वक्षो से
लुढकती
सागर की सी
अठखेलियाँ
कर रही थी
उसकी मधुर मुस्कान
मन को अन्दर तक
आनन्द सरिता से
सींचती थी
बडा लुभावना
दृश्य था
मैं एकटक
देखता रहा
उसके मधुर कपोलों पर
वह अपने हाथों से

तुम्हारे अन्दर
सबके अन्दर
फिर देख
उसका इशारा
जो तुम्हे देगा
हिम्मत ओर आत्म-विश्वास
दिखायेगा तुम्हे रास्ता
दूर करने दु ख इनका
और मिटा देने
अपने गमो को
जो सरोबार हो जाओ तुम
अपने मन मे
डुबो उसे
आनन्द के परावार मे
जहाँ से फिर
निकल न सको
और समा जाओ उस असीम मे
एक रस हो
उसके साथ।

❑❑❑

32. मिल गये

मैं चित्रवत
उसे देख रहा था
पर वह
अपने मे मस्त
फुहारो के नीचे
नहा रही थी
पानी की धारा
उसके वक्षो से
लुढकती
सागर की सी
अठखेलियाँ
कर रही थी
उसकी मधुर मुस्कान
मन को अन्दर तक
आनन्द सरिता से
सींचती थी
बडा लुभावना
दृश्य था
मैं एकटक
देखता रहा
उसके मधुर कपोलों पर
वह अपने हाथों से

मल रही थी
उससे रस धारा
निकली
जैसे वह
मुझमे ही
समा रही थी
धीरे-धीरे
फुहारे शात हुई
ओर वह पोछ
बाहर निकल ही
रही थी
कि तौलिया
झट उसके
हाथो से छूटा
उसने झट देखा
तो उसकी नजर
मुझ पर पडी
और वह
शर्म से झुकी
और में भी
आगे बढा।
अनायास उसने
मुझे छू लिया
ओर मैं भी
लिपट गया
उसमे
और हम दोनो
एक हो गये

एक दूसरे मे
सिमट गये
जैसे एकाकार
से लिपटे हो
सब कुछ भूल
मिल गये।
वह थी तो असीम की
कृति ही
वह बन गई
फिर मेरी पत्नी
और हम लिपटे रहे
जैसे समय
ठहर गया
ओर जब
होश हुआ
तो देखा
वह सामने
खडी थी
चाय का प्याला लिये
आर म सो रहा था
अपने बिस्तर पर।

33. मेरा सत्संगी

मन की परते
खोल खोलकर
मैंने
फूलो की सेज
बनाई हे
अत स्थल को
रोद रोद कर
उस अज्ञानी को
बार-बार चोट
पहुँचाई है
फिर भी वह
अन्दर ही अन्दर
छुप-छुप
करता रहता
मन मर्जी
पर कैसे निकाल फकू
उसको
अपन अन्दर से
मुझ तो
उसक काँटा को चुभन भी
अव प्यारी लगती है
यन जो गया वह

मेरा सत्संगी
सहायक
राह दिखाता मुझको
करता रहता
इशारे बार बार
कहीं भटक न जाऊँ
मैं
इस जीवन हाला में
मृगछाला मे
जो जला जला
कर रही खाक मुझे
पर बचा रहा
उसके इशारे पर
जो छिपा बैठा
मेरे अन्दर
सबके अन्दर।

❑ ❑ ❑

34 ढूँढ़ रहा

मन का दरिया
बह बह कर
भाग रहा
उस ओर
ढूँढ रहा
अपने
प्रियतम को
चहुँ ओर
भूल न पाया
इस जीवन मे
समझ जो बैठा
उनको अपना
खोज रहा
टकटकी लगाए
पर
ढूंढ नहीं रहा
अपने अन्दर
फँस जो गया
माया के जाल मे
दुनियाँ के हाल म।
भूला
इस जीवन को

मत डूबो
इस लीला मे
परखो अपने को
डूबो उसमे
खोजो
अपने को
अपने अन्दर
जहाँ
छिपा बठा
वह चित्तचोर।
फिर देखो
सब ओर
आनन्द के
पारावार को
मिल जो जाओगे
तुम
उस असीम से
जो तुम्हारा
अपना ह
ओर तुम
उसके
अश मात्र हो

❑❑❑

34. ढूँढ रहा

मन का दरिया
बह बह कर
भाग रहा
उस ओर
ढूँढ रहा
अपने
प्रियतम को
चहुँ ओर
भूल न पाया
इस जीवन मे
समझ जो बैठा
उनको अपना
खोज रहा
टकटकी लगाए
पर
डूब नहीं रहा
अपने अन्दर
फँस जो गया
माया के जाल मे
दुनियाँ के हाल मे।
भूला
इस जीवन को

मत डूबो
इस लीला मे
परखो अपने को
डूबो उसमे
खोजो
अपने को
अपने अन्दर
जहाँ
छिपा बठा
वह चित्तचोर।
फिर देखो
सब ओर
आनन्द के
पारावार को
मिल जो जाओगे
तुम
उस असीम से
जो तुम्हारा
अपना हे
आर तुम
उसके
अश मात्र हो

❑❑❑

35 जीवन-लीला

जीवन की लीला को
देखो
पट खुल
पट बद हो जाते हें
साँसो की सुरसराहट को
देखो
झट आ
झट चली जाती है
मिट्टी के पुतले मे
समाया
यह जीवन
लीलामय
इस ससार मे
जो रचा
उस अनजाने ने
खेल खेल मे
और फिर
चलाता रहा इसे
और कोई नहीं जानता
इसका प्रारम्भ
और न कभी होगा
इसका अन्त।

पर तुम तो
अश मात्र हो
उसके
और देख उसे
अपने अन्दर
लगा रट उसकी
समा सकते हो
उसमे
पर पहले
बनो सदाचारी
समझो
दूसरो का दु ख
करो प्रयत्न मिटाने का
उन दु खो को
फिर करो ध्यान उसका
तभी तो वह आयेगा
तुम्हारे पास।

□□□

36. ले चल उडा

जनम जनम के
बॅधन काटे
काट दिया
यह ससार
मेरा तू
अपना
बन गया
इस जीवन मे
मेरा रखवाला
तुझसे
क्या कहूँ
हे तारनहार
तू ही तो
बस ऐसा है
जिसमे डूब
पा लेता हूँ
अपने को
रसीले
मीठे
आनन्द को
जिसमे डूब
भूल जाता हूँ

सब कुछ
अपने को भी
और तुझ को भी
बस डुबकी
लगाता रहता हूँ
पता नहीं
फिर मिले
या न मिले
बगैर सोचे
बगैर समझे
जैसे ढलान पर
लुढकता रहता है।
अब तो तू
आ जा
ले चल
उडा
मुझे
अपने साथ
हे चित्तचोर
कब तक
छिपा बैठा रहेगा
मेरे अन्दर।

□□□

37. मानव हुआ बेहाल

मेरे मन के
बिस्तर पर लेटा
तू क्यों नहीं
उठता रे
सोता रहता
सोते सोते
करता अपनी मर्जी
सोता सोता ही
जगता है
जगता जगता ही
सोता
तेरे को क्या है
तू चाहे जो
कर ले
तेरे सोने जगने मे
अन्तर थोडे ही है
पर देख तो ले
इस दुनिया के
पाप के घडे को
जो भर
उफन रहा
पुकार रहा

यह मानव
हुआ बेहाल
सोच ले
कब कहाँ
आना है
तुझे
प्रगट हो
बन राम कृष्ण
करने सहार,
इन पापियो को
दुष्टो को
जिससे जी सके
आम जनता
सहज आराम से।

38. सोचो समझो

मेरे मानस पर
लिख दी
तूने
मेरी
राम कहानी
मैं कैसे समझूँ
कैसे बिलखूँ
कैसे सोचूँ
अपने मन मे
तेरी झाँकी
तू तो
निराकार हे
निर्गुण है।
× × ×
सोचो समझो
अपने अन्दर
वह तो सच्चिदानन्द है
शाश्वत हे
ईश्वर है
तू तो केवल
मानव है
क्यो नहीं
तू करता

केवल ध्यान
उसी का
लगा रट
उसके नाम को
और डूबता
आनन्द के पारावार में
सत्-चित्त-आनन्द मे
तभी तो
उसके साथ से
मिट जायेगा तू
और फिर
डूब सागर मे
एक हो जायेगा
उसके साथ
फिर तुझमें
और उसमें
क्या अन्तर होगा
जब मिल
एक हो गये।
तत् त्वम् असि।

□□□

39 ढूँढ लूँगा

कर दो मुझे
दूर
इस दुनिया से
ढूँढता रहूँ जो
उस अनजाने को
भुला जो दिया
उसने मुझको
फेक
इस पृथ्वी पर।
ढूँढ कर
उसे
छोडूँगा नहीं
सिल लूँगा
अपने साथ
पिरो उसे
मन की आँखो मे
फिर कैसे
दूर हो सकेगा
वह
चलता रहूँगा
उसी के साथ
लिपट जो

एक हो जाऊँगा
रम उसी मे
घुल घुल
एक जी हो
बन जाऊँगा
समरस
फिर केसे
अलग कर सकेगा
वह मुझे
डूब जो जाऊँगा
सरिता बन
उस अथाह सागर मे।

40 मिल एक हो जाओ

रात के अधियारे में
देखा है मैंने उजाला
सूर्य की तपन मे
ली है ठडक की साँस
दु ख की वेला मे
सजोये है मन मे
शान्ति के सपने
चिलचिलाती धूप मे
पिरोये हे सुनहले सपने
दूसरे के दु ख मे
बढाये हैं हाथ
दूर करने उसका गम
दुश्मन को भी
बना लिया अपना
मन को जब कर लिया
अपने वश मे
उस असीम से
मिला तार से तार।
फिर क्या धरा है
इस पृथ्वी पर
मिटा दो यह हस्ती
और मिल
एक हो जाओ
उसके साथ
जिसका तुम
अश हो।

□□□

41. कहाँ जा सकेगा

मिला दो
मुझे
उस अजनबी से
जो देखकर भी
रुला रहा मुझे।
तडफ तडफ कर
उसकी याद मे
पगला गया
पर वह तो
हो गया बहरा
झट मुँह फेर
मुस्करा देता है
क्या चाहता है ?
मैं तो उसे भी
रुला दूँगा
अपने साथ
छोडूँगा नहीं
करता रहूँगा
पीछा उसका
चिल्लाऊँगा
जोर जोर से
नाम ले उसका

कर दूँगा बदनाम
समूचे ब्रह्माण्ड मे।
क्या तभी वह
आएगा मेरे पास
बनाने मुझे
अपना ?
अरे मैं तो
उसी का हूँ
चाहे अश हूँ
और समा भी जाऊँगा
उसमे
जब पहचान लूँगा
उसे अपने अन्दर
फिर कहाँ जा सकेगा
वह चित्तचोर
मुझसे छिपकर।

C

42. अजीब लम्हें

भूलकर भी
भूल न सकेगे
हम तुम्हे
बस जो गए
तुम मेरे
जीवन-आँगन मे।
याद है मुझे
वे अजीब लम्हे
जब तुम और हम
हो गए थे एक
मिलन की रात
करने
नवजीवन का
सचार।
छुपा लिया था
तुमने मुझे
अपने अन्दर
जैसे
छिपा बैठा
यह चित्तचोर
हिलाता
सबको

कर दूँगा बदनाम
समूचे ब्रह्माण्ड मे।
क्या तभी वह
आएगा मेरे पास
बनाने मुझे
अपना ?
अरे मैं तो
उसी का हूँ
चाहे अंश हूँ
ओर समा भी जाऊँगा
उसमे
जब पहचान लूँगा
उसे अपने अन्दर
फिर कहाँ जा सकेगा
वह चित्तचोर
मुझसे छिपकर।

42. अजीब लम्हे

भूलकर भी
भूल न सकेगे
हम तुम्हे
बस जो गए
तुम मेरे
जीवन-आँगन मे।
याद है मुझे
वे अजीब लम्हे
जब तुम और हम
हो गए थे एक
मिलन की रात
करने
नवजीवन का
सचार।
छुपा लिया था
तुमने मुझे
अपने अन्दर
जैसे
छिपा बैठा
यह चित्तचोर
हिलाता
सबको

अपनी डोर से
और करता रहता
सृजन
पुनर्जन्म
नए जीवों का
सबका।
उसी कडी मे
मिल बैठे थे हम
खिलाने नई कोपले
अकुर नव फूल का
नव फल का
नव वृक्ष का
जो अब
लहलहा रहा
इस आँगन मे
दिलाता याद
तुम्हारी
ओर उस
सुनहरी रात की
जब बादलो की
चमक ने
हिला मिला दिया था
हम दोनो को
उस अधूरे
वातावरण मे।

43. मन की माया

जनम-जनम के
बँधन काटे
काट दिया
यह ससार।
मन की माया
मन क्या जाने
मोह-भग
होता किससे है
लिपटा रहता
इस तन मे
इस जीवन मे
नश्वर कल्पो मे।
सच्चा मन तो
बिरलो ने ही
पाया है
खोद खोद
गहरे तम मे
एक हो
उसके साथ
जो छिपा बैठा है
उसके अन्दर
खेलता
लुक्का छिप्पी।

❑❑❑

44. परखो अपने जीवन को

ईश्वर की माया को
समझो
परखो
अपने जीवन को
रोने दो
मन को
करने दो
उसको
नत्मस्तक
उस ईस के पास
धोने दो
अपने पापो को
घुलने दो
उसमे उसको
रिस रिस
घिस घिस
मिट जाने दो
अपने सस्कारो को
रह जाने दो
फिर शेष
उसी को
जो छिपा बैठा
अन्दर तुम्हारे
हिला रहा
तुम्हे
और सबको
अपनी डोर से।

45. रम जो गये थे

मन के द्वारे
खोले हमने
खुल न सके
इस जीवन के
रगो मे
पडे शिथिल
शैया पर
सोच सोच
डूब रहे
गम मे
पड गई
भग
जीवन के
रगो मे
रम जो गये थे
रगीनियो मे
जीवन की हाला मे
भूले उसे
जो छिपा बैठा रहा
अन्दर ही अन्दर।

46. ऊपर की मंजिल

गम के थपेडे
सह सह कर
हमने इस
डलिया की नींव
बनाई है
तम के अधेरे मे
रह रह कर
बगिया की नींव
भराई है
अन्त स्थल को
ठोक ठोक कर
प्रकाश किरण की
लाली में
मजिल पर मजिल
चढाई हे
ऊपर की मजिल पर
चढा अब
देख रहा
उसकी लीला को
जिसके सहारे
पहुँचा यहाँ तक
डूब अब

समा जाने उसमे
जो छिपा बैठा है
मेरे अन्दर
हिलाता मुझे
और सबको
अपनी डोर से।

□□□

47 देख रहा अपने को

मन की पलके
खोल खोल
मैं देख रहा
अपने को
अन्दर की महिमा को
अपने सर्वस्व को
जो छिपा रहा
वह
अपने से
अपनो से
छिपा बैठा
अन्दर ही अन्दर
हिलाता सबको
अपनी डोर से।
भूल गया
अपने को
चकित हो
भ्रमित नहीं
प्रकाश की
ज्वाला मे
चकाचौंध हो
रहा भौचक्का सा

डूब उसमे
भस्म हो
मिल
एक होने के लिए
वही तो
सर्वस्व है
मेरा ही नहीं
सबका
ईश्वर
जो ठहरा।

❑❑❑

48. मन सागर से गहरा

मेरा मन
सागर से गहरा
देता
दिन रात
उसी का पहरा
कहीं वह
भ्रमित हो
डूब न जाये
अपने मे
भूल उसको
लिपट
माया के
मोह जाल मे
इस जीवन की
हाला मे
उँडेल अपने मे
मदिरा के प्याले को
मदमस्त हो
अपने मे
जीव के
जजाल मे।
पर कर न सकेगा

अन्तर्ध्वनि

वह
अपनी मर्जी
छोडता नहीं जो
उसे अकेला
चिपटा जो
दिया मैंने
उसे चित्तचोर से
जो छिपा बैठा
अन्दर
गहरे सागर में।

□□□

49. मन का मीत

मेरे ईश्वर
मन का मीत
बनाले मुझको
में तो
तेरा बालक
ऊधमी
क्या कर सकता हूँ
ना समझ मूरख
हठी
रो रो
चिल्ला सकता हूँ
जीवन-यात्रा के
अंतिम पडाव मे भी
रहा नादान का
नादान
समझ न पाया
तेरी माया
ढोता यह काया
अब तो बस
तेरा ही आसरा

भूल जा
मेरे पापो को
मेरी हठधर्मी को
निकल बाहर
मेरे अन्दर से
ले उडा चल
मुझे
अपने साथ।

50. बिक गई

सौन्दर्य की मूरत
बिक गई
अभावों मे
कामिनी की गरिमा
मिट गई
क्षणो मे
देखो
रूप यौवन का
क्या हुआ हश्र
इस बिगडे
जमाने म
खाने को न था
जो खाक कर दिया
दुश्मन ने
घर आकर
उजडे आगन मे
करणा का बाँध भी
न पिघला सका
विषैले नाग को
मार फण
लहूलुहान
कर दिया

नारी के सतीत्व को
देखो
मानव
कहाँ से कहाँ
पहुँच गया
इस इक्कीसवीं
सदी मे
इन्हें तो डूब
समा जाना चाहिए
इस नदी मे
इसी जीवन मे।

51. मृत्यु

मृत्यु
अन्त नहीं
जीवन का
प्रारम्भ है
नव-जीवन का
मत डरो इससे
भूलो इसको
रम जाओ
इस जीवन मे
मिल जाने
उस
अखण्ड ज्योति मे
जो लय है
इस ब्रह्माण्ड का
और इस जीवन का भी
तभी तो
तुम लयाधीन हो
उसके
जो छिपा बैठा है
तुम्हारे अन्दर
हिलाता सबको
अपनी डोर मे।

52. मन-सरिता

मन की पीडा
तन के आँसू
तन की पीडा
मन के आँसू
घुल एक हो
बह निकले
मन-सरिता से
ढूँढते
अपने सागर को
उद्‌गम स्थल को
वही तो उसका
आदि है
और अन्त भी
पर पता नहीं
कब तक
छिपा रहेगा
वह
अन्दर ही अन्दर
जब तक
मैं
पहचान न लूँ

51. मृत्यु

मृत्यु
अन्त नहीं
जीवन का
प्रारम्भ है
नव-जीवन का
मत डरो इससे
भूलो इसको
रम जाओ
इस जीवन मे
मिल जाने
उस
अखण्ड ज्योति मे
जो लय है
इस ब्रह्माण्ड का
और इस जीवन का भी
तभी तो
तुम लयाधीन हो
उसके
जो छिपा बैठा है
तुम्हारे अन्दर
हिलाता सबको
अपनी डोर मे।

52. मन-सरिता

मन की पीडा
तन के आँसू
तन की पीडा
मन के आँसू
घुल एक हो
बह निकले
मन-सरिता से
ढूँढते
अपने सागर को
उद्‌गम स्थल को
वही तो उसका
आदि है
और अन्त भी
पर पता नहीं
कब तक
छिपा रहेगा
वह
अन्दर ही अन्दर
जब तक
मैं
पहचान न लूँ

51. मृत्यु

मृत्यु
अन्त नहीं
जीवन का
प्रारम्भ है
नव-जीवन का
मत डरो इससे
भूलो इसको
रम जाओ
इस जीवन मे
मिल जाने
उस
अखण्ड ज्योति मे
जो लय है
इस ब्रह्माण्ड का
और इस जीवन का भी
तभी तो
तुम लयाधीन हो
उसके
जो छिपा बैठा है
तुम्हारे अन्दर
हिलाता सबको
अपनी डोर मे।

❑❑❑

52. मन-सरिता

मन की पीडा
तन के आँसू
तन की पीडा
मन के आँसू
घुल एक हो
बह निकले
मन-सरिता से
ढूँढते
अपने सागर को
उद्‌गम स्थल को
वही तो उसका
आदि है
और अन्त भी
पर पता नहीं
कब तक
छिपा रहेगा
वह
अन्दर ही अन्दर
जब तक
मैं
पहचान न लूँ

अपने आप को
अपने अस्तित्व को
उस चित्तचोर को
जो छिपा बैठा है
मेरे अन्दर
सबके अन्दर
जब तक एक हो
मिल न जाऊँ
उसके साथ।

53. डुबोता रहूँगा

समेट लूँगा
खुले आसमाँ को
अपने मन में
भिगो भिगो
तेरे नाम से
फिर न जाने दूँगा
तुझे निकल बाहर
मेरे मन से
भिगोता रहूँगा
तुझे भी
तेरे नाम से
डुबोता रहूँगा
अन्त सागर में
जब तक
तू
बना न ले
मुझे
अपना सगी साथी
प्रगट हो

मेरे सामने
और फिर उड़ा चल
मुझे
अपने साथ
ब्रह्माण्ड के पार
बना मुझे भी
अनन्त अपार
निश्चल समयातीत
दूर कर इस माया जाल को।

❑❑❑

54 जीवन जन्म है मृत्यु का

जीवन जन्म है
मृत्यु का
प्रकाश पुँज के
चहुँओर
घने तम का
सूर्य को ढकने
काले बादलो का
जो ओतप्रोत है
छिपी दामिनी से
जिसका जन्म होगा
टकराहट से
झकझोरने से
अन्त स्थल को
उतार फेकने
मैले कुचैले को
जला खाक कर
दामिनी की चमक मे
और आलिगन करने
वेग से
उसका
जो छिपा बैठा है
उसके अन्दर।

❑❑❑

55. घुल जाऊँगा

मन का मीत
पिला दो मुझको
विष-हाला, विष-प्याला
घूँट घूँट पी पी उसको
बना अमृत
घोल घोल
तेरे नाम को
बन जाऊँगा
तेरा ही तेरा
न बचूँगा
न रुकूँगा
घुल जाऊँगा
तेरे नाम मे
बस जाऊँगा
तेरे अन्दर
हटा तुझे
डुबो अपने मे
डूब तुझमे
एक हो
तेरे साथ
अन्दर ही अन्दर
फिर कहाँ

जा सकेगा तू
अकेला
रहूँगा जो
तेरे साथ सदा
एक जो हो गये
मैं और तू
फिर क्या अन्तर
मुझ मे ओर तुझ मे।

56. अग्नि के अँगारे

मेरे सपनो को
सोने दो
मेरे मन को
जगने दो
तप तप कर
रिसने दो
नहलाने दो
मुझको।
तन को
जलने दो
जल-जल कर
मरने दो
उगलने दो
अपने पापो को।
बसने दो
मुझको
अग्नि के अगारो मे
राख होने दो
इस शरीर को
मै तो फिर
उड
बस जाऊँगा

जहाँ बसाएगा
वह
अभी तो
बसना ही है
मेरे भाग्य में।

□□□

57. घट

मन के अन्दर
उसे छिपा
मन को
रिसने दो
रिस रिस कर
बहने दो
अन्तर्यामी के
घट को
भरने दो।
फिर वह
क्या कर सकता हे
डूब डूब
अपने घट मे
निकल आएगा
बाहर मिलने
तुम से
छिपा कैसे
बैठा रहेगा
तुम्हारे अन्दर
वह चित्तचोर।

❑❑❑

58. भूल अपने को

झेलते झेलते
जीवन का यह
जजाल
हो गया मैं
कगाल
बिखर गए फूल
दूर दूर
देखने की उन्हे
तो बात ही क्या
सूँघ भी नहीं पाता
खुशबू उनकी
रह गए अब
हम दो अकेले
टकराते आपस मे।
× × ×
मत रो
मत कर इस माया से
इस काया से
इतना मोह
मिलना तो अत मे
है मिट्टी से
दो भी क्या

रह जाओगे फिर अकेले
और सोचते सोचते
समा जाओगे
चिर निद्रा में।
सोचो समझो
अपने को
हो अन्तर्मुख
कर उसका ध्यान
जो छिपा बैठा है
तुम्हारे अन्दर।
वही तो है
तुम्हारा सदैव का साथी
जीवन-मरण मे
व मरणोपरात भी
तो फिर क्यो नहीं
देखते अपने अन्दर
और लगाते टकटकी
उसकी ओर
भूल अपने को
और इस जीवन को।

59. देख रहा अंधेरे मे

मेरा मन
रोता है तो
मैं हँसता हूँ
हँस हँस कर
दफना देता हूँ
आँसुओं की सरिता को
मिटा देता हूँ
रुलाई के बीज को
भुला देता हूँ
उस घटना को
उन भावो को
जिन्होने घेरा था
मेरे मन को
चहुँ ओर
डुबो दिया था
उसे
गम के अधेरे मे।
मैं तो अब
देख रहा
अधेरे मे
प्रकाश पुज को
प्रस्फुटित

नव पुष्पो को
खिलती कलियो को
जो सरोबार कर रही हैं
मुझे
ले जाने
उसके पास
जो छिपा बेठा है
मेरे अन्दर।

□□□

60. हम खो लिए

खोलकर
हम खो लिए
उस महा के
प्यार मे
भूलकर
हम सो लिए
इस जहाँ के
क्यार मे।
जग गए
हम अब
भूल नहीं सकते
उस अदृश्य के
प्यार को
रम गये जो
उस महा के
ख्याल मे
और पा लिया जो
अपने आप को
समाकर
उस असीम मे
अनन्त मे
एक हो
उसके साथ।

□□□

नव पुष्पो को
खिलती कलियों को
जो सरोबार कर रही हैं
मुझे
ले जाने
उसके पास
जो छिपा बेठा है
मेरे अन्दर।

60. हम खो लिए

खोलकर
हम खो लिए
उस महा के
प्यार मे
भूलकर
हम सो लिए
इस जहाँ के
क्यार में।
जग गए
हम अब
भूल नहीं सकते
उस अदृश्य के
प्यार को
रम गये जो
उस महा के
ख्याल मे
और पा लिया जो
अपने आप को
समाकर
उस असीम मे
अनन्त मे
एक हो
उसके साथ।

❑❑❑

61. सीखा है

गम के फफोले
सह सह कर
गम को पीना
सीखा है
तन की कुँठाओ को
रोद रोद कर
जीवन जीना
सीखा है
अपने अन्दर
अधियारे मे
झाक झाक कर
ज्योति पुज की
किरणो को
आख मूद मूद कर
पहचाना निहारना
सीखा हे
अपने अतर्मन को
गोद गोद कर
अपने मन को
अपने को
समझना-समझाना
सीखा है।

सीख सीख कर
रम गया मैं अब
अपने राम मे
व्याकुल हो रहा
तडप रहा
उससे मिलन
की चाह मे
पता नहीं
कब वह
बुलायेगा
मुझे ?
कर भी तो
कुछ नहीं
सकता
बस टकटकी लगाए
सदैव देखता रहता हूँ
उसकी ओर
रम जो गया
उसमे
अपने राम मे।

❑❑❑

62 जग जो गया

दाना चुग चुग
मैंने अपने अन्तर को
पनपाया है
उसका गाना
गा गाकर
अपने जीवन को
भरमाया है
अन्तर्मन से
बोल बोलकर
उसको रोद रोद
गरमाया है
अग्नि की लपटो से
धुँए को मिटा मिटा
अँधियारे मे
ज्योति पुज को
दर्शाया है।
आँख मूँद मूँद
अन्त करण मे
झाँक झाँककर
स्वर्ण किरण की
लाली को
मैंने देखा है।

उसके प्रकाश को
आत्मसात कर
डूब डूब चुका
अब अँधियारे के
सागर मे
टकटकी लगा
देखता
उस प्रकाश को
जो सर्वत्र है
पर जिसे
बिरला ही
समझ
पहचान पाया।
अब तो आतुर हूँ
एक हो जाने के लिए
उसके साथ
और समा जाने
असीम मे
जग जो गया
समझता
अपने अनन्त
विस्तार को।

❑❑❑

63. मेरे प्रियवर

मित्र की कथाएँ
याद रहेगी
जिन्दगी भर
रुलाती घुमाती रहेगी
सपनो के
सुनहले ससार को
बुझा भी
न सकेंगी
उसकी यादो को।
आँसुओ के अम्बार
की सरिता भी
बहा नहीं सकेगी
बुझा नहीं सकेगी
मेरे अन्दर की
चिन्गारी को
जो तिल तिल जला
खाक करती रहेगी
इस लोथडे के
अवशेषों को

जब तक
ढेर हो
समा न जाये
अग्नि की लपटो मे
सोने सुलाने
चिर निद्रा मे
एक होने के लिए
उसके साथ।

❑❑❑

64. भुला न सकेगे

जिन्दा दिली से
जिन्दा रहेगे हम
धडकनें दिल की
चूम चूम कर
करते रहेगे
पुकार आपकी
नहीं खोयेगे
अपने को
इस वीराने मे
साथ जो होगा
आपकी यादो का
पर भुला न सकेगे
हम आपको
खोजते रहेगे
अधेरे मे प्रकाश को
टिमटिमाती लो को
जो रास्ता बताती रहेगी
भटकते लोथडे को
जो शून्य मे डूब
पडा निढाल, निश्चल
अधीर मिलने को
आपसे।

❑❑❑

65 सुनहले सपने

सुनहले सपने
गूँथे हमने
मिटा मिटा
मन की मलिमा को
नयनो की कालिमा को
आँसुओ के अम्बार मे
डुबो बार बार
सपनो के ससार को
करने साकार
इस जीवन के
ललकार को
अन्तर-आत्मा के
हुँकार को
जो घने तम मे
बुलाती रही
बार-बार
दिखाने प्रकाश पुज को
ज्योति-पिड को
जीवन के सर्वस्व को
ब्रह्माण्ड के अकुर को
ले जाने उस ओर
शून्य मे अनन्त मे
बना निश्चल निस्तब्ध।

❑❑❑

66 सुनने दो उस अज्ञानी को

कटने दो
मेरे पापो को
भरने दो
मेरे घावो को
मत रोको मुझे
रोने दो
अपने अन्तर्मन से
चीख चीख कर
अन्दर ही अन्दर
सुनने दो
उस अज्ञानी को
निष्ठुर को
बैरी को
जो छिपा बैठा
रुला रहा
बार बार मुझे
पर नहीं बुला रहा
नहीं आ रहा
नहीं दिख रहा।
कोन कहे उसे
सर्वस्व जो ठहरा
सर्वत्र अनन्त अपार
जानकर भी

बन रहा अज्ञानी
खेर
थका हारा
रट लगा रखूँगा
उसको
चाहे जो करे
वह मर्जी का मालिक।

❑ ❑ ❑

68 पुकार रहा

मेरे मन के
तारो ने
वीणा का साज
सजाया है
मेरे सासों की
सुरसराहट ने
उसका गाना
गाया है
मन अन्दर से
बोल बोलकर
पुकार रहा
अपने साथी को
तन खडा अवाक्
देख रहा
करता इतजार
आतुर सुनने को
सुरसराहट उसकी
जो छिपा बैठा है
मेरे अन्दर
सबके अन्दर।

❑❑❑

69. जीवन के खेल

कोई न अपना
कोई न पराया
सब
जीवन के खेल हैं
माया के मेल हैं
बनाया उसने
अपने अन्दर
माया के जाल को
ओर समझ बैठे
हम मलिन हुए
इसी को
अश सत्य का
भूल गए जो
अपने
सर्वस्व को
देख रहे
अपने को
मैला कुचैला।
मिटाओ
अपनी कीचड को
दूर फेंक दो
जाल को

घुस अपने अन्दर
फिर बन जाओ
वही एक बार
भूल मृगतृष्णा को
देख अपने
असली रूप को
पहचान
सत्य को
लगा चित्त
उसमे
ओर पाने
आनन्द ही आनन्द
अपार असीम अनन्त।

❑❑❑

70. मिटा रूप-रंग-नाम

अग्नि-ज्वाला के
स्फुलिगो को
पनपने दो
मन मे
मत डूबने दो
तन को
इस जगहाला मे।
बहने दो
भावो को
जीवन सरिता मे
डुबकी लगा
बार बार
स्वच्छ होने दो
उन्हे
इस जीवन मे
परिपक्व बन
फूटने दो
मिल जाने
अटूट मे
बिखरने दो
बन ठोस तरल
मिटा रूप रग नाम

एक होने दो
अनन्त के साथ
उजागर कर
अपने असीम को
हो निश्चल निस्तब्ध।

70 मिटा रूप-रंग-नाम

अग्नि-ज्वाला के
स्फुलिगो को
पनपने दो
मन मे
मत डूबने दो
तन को
इस जगहाला मे।
बहने दो
भावो को
जीवन सरिता मे
डुबकी लगा
बार बार
स्वच्छ होने दो
उन्ह
इस जीवन मे
परिपक्व बन
फूटने दो
मिल जाने
अटूट मे
बिखरने दो
बन ठोस तरल
मिटा रूप रग नाम

एक होने दो
अनन्त के साथ
उजागर कर
अपने असीम को
हो निश्चल निस्तब्ध।

71. जगा स्व को

मेरे हमदम
मेरे मालिक
मन को मोड
हिला दो मुझको
तन को रोड
डिगा दो उसको
मत जाने दो उसको
मोह माया के पाश मे
जगा स्व को
बना दो उसे स्थिर
हो जाये तन भी
फिर स्वस्थ
और बस जाए
मन अपने मे
कर नियन्त्रण
डूब जाए
अत सागर मे
लेने ठोर उसी की
जो हिला रहा
छुपा अन्दर ही अन्दर
पर होता नहीं प्रगट
लाख यत्न करने पर भी।

पर अब मैं
डूब चुका
मन सागर मे
ढूँढ रहा
गहन तुम मे
जा कहाँ सकता हे
अब वह
मुझसे बचकर
जगा दिया जो
दीप मैंने
अन्त सागर मे।

□□□

72 मेरा मन बहता सागर

मेरा मन बहता सागर
सागर से भी गहरा
नभ से भी ऊँचा
पहुँच जाता क्षण मे
पाताल मे भी, स्वर्ग लोक म भी
चचल जो ठहरा।
झट छूता आकाश की ऊँचाई
समुद्र की गहराई
वह जाता किसी भी दिशा म
छू लेने अपने भाव को
मन-तरग को।
मैं ब्रह्माण्ड से भी प्राचीन
नहीं अर्वाचीन
अदृश्य सच का अश जो ठहरा।
भूल गया अपने को
वह गया मन के साथ
डूब गया जग-सागर मे
चेत हुआ तब
जब पडा शैया पर
वयस निढाल शक्तिहीन
थका हारा गमगीन

लेता आखिरी सास।
वे सब हुए दूर
जिन्हे समझ बैठा था अपना।
बहुत देर हो गई थी
फिर भी उसी का तो सहारा था
मैंने जो उसकी रट लगा रखी थी
और मेरी सास की गिनती भी
उसी का नाम लेते
पूरी हो गई थी
शेष रह गया था यह नश्वर शरीर
मेरे कर्म तो जुड गए थे
रम गए थे
मेरी आत्मा में
पता नहीं
फिर नश्वर ससार मे
डेरा डालना होगा
या वह मुझे
अपने मे
मिला लेगा
एकाकार करने के लिए।

❑❑❑

73 तेरे मेरे मे अन्तर क्या ?

मरे मन के अगारे
मेरे तन का शृगार बने
पर में हूँ कान ?
मन की अगडाई
तन की तरुणाई
बुद्धि की चतुराई
मुझे न जाने
किस लोक मे ले गई
न जाने
कोन कोन से प्रसाद दे गई
पर में हूँ कोन ?
मन की निमलता
तन की सुन्दरता
बुद्धि की भावुकता
न जाने क्यो
मुझे वरबस ही
उसके पास ले जाती हे
ओर मुझे उससे मिलन करने को
बाधित करती है
पर मे हूँ कोन ?
तू में हूँ, में तू है
तेरे मेरे मे अन्तर क्या
म आत्मा हूँ, तू परमात्मा हे
पर इसको समझे कोन ?

❑❑❑

74 बादल

तुम्हारे तन की तपन
ले आई मुझे तुम्हारे पास
मैं उडता उडता पहुँच गया
जहाँ तुम अकुलाई लेटी हो
विरह की ज्वाला मे जल रही हो।
लो आ गया मैं
और मैंने अपने मन की परते
काली पीली धवल तुम्हारे ऊपर फैला दी
तुम्हे ढकने के लिए
तुम्हे तपन से राहत पहुँचाने के लिए।
पर यह क्या ?
मैं भी तुम्हारे साथ तडप रहा हूँ
तुम्हे ठडक देने के लिए
तुम्हारा साथ देने के लिए
या अपने विरह मे
और मेरे टप टप आँसू तेरे ऊपर
बह बह कर
तेरी करुण वरुण गाथा कर रहे हैं
तेरे स्वर मे गा रहे है
तुम्हारे वक्षस्थल के चारो ओर
प्रवाहित हो

तुम्हे सान्त्वना दे रहे हैं
पर मैं थोडी ही देर मे
बहता हुआ
कराहता हुआ विरह मे
वापिस समा जाऊँगा
अपने सागर मे
जो मेरा जन्मदाता है
और जिसकी आज्ञा
मुझे शिरोधार्य है।

75 व्याकुल तेरे पास पहुँचने को

मेरे मन का मीत
कहाँ चला गया रे
मुझे छोड
मुझे मोड
मुझे तोड।
मैं तो बावरी बनी री
तेरे प्यार मे
मैं तो बार बार रोऊँ
नयनो को छिपाऊँ
कभी नजर न लगे रे।
मैं तो जल रही रे
नयनो से पानी नहीं बरसे रे
बादल बन बनकर उड उडकर
पिया से मिलन को चली रे।
मैं तो आकुल भई
व्याकुल रही
ठगी की ठगी रह गई
झट बादल पर बैठ
उडन को चली रे
अपने पिया से मिलन को
तू तो निष्ठुर रे

मुझे बुलाये नहीं
तू आये नहीं
पर मैं तो तेरे पीछे पडी
झट उड चली, आ रही रे
तुझे पकड तुझसे लिपट जाने को
तू जहाँ जायेगा
मैं वही पहुँच जाऊँगी रे।
मेरा मन पवन वेग के साथ
उड रहा
मुझे बादलो पर बैठे-बेठे
तेरे पास पहुँचा रहा
तू कहाँ जायेगा ?
मैं तो बस आ रही हूँ रे,
तू रुक भी जा रे
मैं व्याकुल-आकुल हूँ
जल्दी तेरे पास पहुँचने को।

❑❑❑

76 जीने का सहारा

माझी मुझे पार लगा दे,
में अलबेली मतवाली
नीर भरी दु ख की प्याली
रो रो कर थक चुकी हूँ
मेरो प्रियतम मुझे यहॉ छोड
पता नहीं कहाँ चला गया ?
में लता सी उससे लिपटी रही
पर वह मुझे सोते हुए को
धोखा दे भाग गया
उसने कहीं आर तो बसेरा नहीं डाल लिया ?
माझी तू मुझे वहाँ ले चल
मैं क्षणभर उसे देख भर लूँ
कि मेरा प्रियतम खुश तो हे
कहीं मेरी सोतन उसे दु ख तो
नहीं दे रही
माझी फिर तू मुझे वापिस
ले आना।
मैं तो उसकी याद मे
पगला गई हूँ
मैं तो उसकी याद को ही
अपने जीने का सहारा बना लूँगी
और उसके अकुर को

देख देख गदगद होती रहूँगी
फिर तू जा उसे सदेशा भी दे आना
अकुर से फिर फूल व फल
पैदा होगे
और यह बाग फिर हरा भरा हो
खिल उठेगा
मेरे जीने का सहारा बनेगा।

❑❑❑

77. समझ का फेर

मेरा मन सागर से गहरा
अन्दर डूब डूब कर मैं भरमाया
पर कहीं भी अत नहीं आया।
मोती चुग चुग मैंने सजोये
फिर भी रहा खोया खोया
दूर दूर तक कुछ भी नहीं दिखा
फिर भी मैंने क्या सबक सीखा ?
देखता रहा अपने अतर्मन को
अतर्द्वन्द्व को
अपनी तडपन को
पर नहीं अपनी पीडा को
मैंने बीडा जो उठा लिया
उसे पाने का
उसके पास पहुँचने का
या उसे अपने पास ले आने का।
पर वह तो सर्वत्र है
मेरे मन मे भी है,
मेरे शरीर मे भी है
मेरे बाहर भी है
मेरे अन्दर भी है
फिर तू उसे क्या पास लायेगा ?
समझ का ही तो फेर है

शात हो जा
उसका ध्यान कर
तू स्वय उसे महसूस करने लगेगा
उसका प्रकाश
तेरे अतर्मन को
प्रज्वलित कर देगा
तू चकाचौंध हो जायेगा
देखना भूल जायेगा
पर उसे महसूस कर लेगा
और फिर परमानन्द है
जो चिरस्थायी है
स्वर्ग नहीं है
पर स्वर्ग से भी परे है
उससे भी अधिक
आनन्ददायक है
तुम्हारा एकाकार
जो हो जायेगा
उस परब्रह्म से
उस अलौकिक शक्ति से
जिसे बिरलो ने ही
जाना है।

78. उठो चलो

खुले आकाश के नीचे
मैंने जीना मरना सीखा है।
समेटे अपने तन को अपने मे
भूखा नगा मैंने
जीवन के दीपक को
टिम टिम कर
जलते देखा है।
यादो के सहारे मैं
उन परतो को खोल खोल
देख पढता हूँ।
जीवन के उन क्षणो को
कैसे म भूल सकता हूँ
जब भूखा रहकर भी
मेरा यह शरीर चलता रहा
बनाने अपना बसेरा
और पहुँच जाने
इस चोटी पर
जहाँ बिरले ही पहुँचे हैं।
पर अब मैं
यहाँ पहुँचकर
फँस गया इन्द्रजाल मे।

सुरक्षा दल चारों ओर मेरे
रोकते हैं मुझे
मेरी स्वतन्त्रता को
वहाँ पहुँचने से
जो मेरा घर था।

× × ×

पर तुम परवश कहाँ हो
तुमने तो स्वय अपने को
बाधा है।
उठो चलो
बनाओ समाज को
करो दु ख दूर
उन सबका
जो अब भी डरे हुए हैं
जी रहे हैं अभागे
उन गदी बस्तियो मे
भूखे नगे।
तुम भी तो ऐसे थे
पर दूर हो रहे हो
दर किराना करते उनसे
महल मे जो पहुँच गए
नहीं तो बनाते उन्ह
उठाते आगे
पढाते लिखाते सबको।

□□□

79. मिट्टी के ढेले पर

मिट्टी के ढेले पर
मैंने जीना मरना
सीखा है।
सीधा खडा सदियो से मैं
देख रहा हूँ इन सब
रखवालो को
मतवालों को
मार गिराने वालो को।
क्या बिगाडा मेरे साथियो ने
रक्षा की इन चट्टानो की
रोका इन्हें जलने से
सूर्य की तपन से
पिलाया इन्हे वर्षा का
अमूल्य जल
आलिगन कराया बादलों से
पर ये सब भूल गये
जब हो गए तैयार
हमे उखाड फेकने को।
मैं अभागा बच गया
इनके तीखे बर्छों भालो से
पर अब नहीं बचूँगा
हो गया जीर्ण-शीर्ण

वैसे भी ये उखाड फेकेंगे
इन चट्टानों को
मिट्टी के ढेलो को
बारूद की सुरगों से
खोदने पत्थर
और बनाने अपने मकान।
मैं फिर समा जाऊँगा
जन्मदात्री की बाँहों में
मिटाने अपने अस्तित्व को
इस जीवन को
और उड पहुँचने दूसरे लोक में
अपने पुराने
इस जीवन के
साथियों के पास
जो कब से मुझे
बुला रहे हैं
दूर करने आज के
इन नरभक्षी
मानवों से।

□□□

80. बन गया कृष्ण सुदामा का

प्रियतम से उसे प्यार बहुत है
पर मन में आक्रोश बहुत है
अपने में उद्वेलित रहती है
अपना अपना ही सोचा करती है।
प्रियतम को भी उससे प्यार बहुत है
और मन में संतोष भी बहुत है
अपने में शात रहते हैं
दूसरों का भी अपना होकर सोचा करते हैं।
प्रिया प्रियतम की भिन्नता का
हो जाता है एकाकार
दोनों हो जाते हैं एक
अकुरित करने नए पुष्प को
रचना करने नए ससार की
नये जीवन की
समेटे होगा जो अपने में
प्रेम सौन्दर्य सतोष।
सुषमित होता वह अपने रूप में
बढता फलता-फूलता
लेता हिलोरे नई बीथियो मे
सकुचाला उकसाता यौवन में
लिपटने नई लता से
अलसाई सुगधित उद्वेलित

देती नव यौवन का अहसास
और पहुँच जाती महक एक की
दूसरे के पास।
जीवन का क्रम चलता रहता
मस्त रहते सब एक दूसरे मे
दूर बैठा वह निहारता रहता
सोच सोच अपनी लीला पर।
अचानक देखा उसने
ये सब तो देख रहे हैं उसको
अपने ध्यान मे
मन पर जो कर रखा है नियत्रण
शात स्निग्ध शीतल होकर।
फिर क्या था
द्रवित हुआ वह
लीला का नायक
बदल कर रूप पहुँच गया
बन गया कृष्ण सुदामा का।
सब अपने अपने में शान्त थे
मस्त थे रखे ध्यान उसका
फिर हो गया
वातावरण खुशी का
पा जो लिया था इस जीवन में
अपने सृजनकर्त्ता को।

□□□

81. हिलारें ले रहा था

धधकते आँसू
पिघलते नयन
देते दुहाई उसकी
कराते आभास
अपने मन को
पश्चाताप का
बीती गाथाओ की
उन घिनौनी कडियो का
अपने सकल्प की
उन लडियो का
जिससे मन के द्वारो को
खोल
आ पहुँचा वह इस छोर
होकर अमीर
जागकर यह वीर
देखता अपनी राह
तकता उसकी चाह
लालायित पाने उसे
छोड अपना सब कुछ
जिसे वह अपना
समझ बैठा था।

आँसू-सरिता के साथ
बह गया वह
डूब गया सागर मे
छूने तल उसका
महसूस करने उसे
जो कब से वहाँ
उसके मन सागर में
बैठा
हिलोरे ले रहा था।
पर वहीं नहीं जान सका था
सोच भी नहीं सका था
भटक जो गया था वह
भूल जो गया था राह
पहुँचने की उसके पास।
पर अब जाग गया है
मन उसका
और वह डूब गया है
मन सागर मे
पाने एक झलक उसकी।

❑❑❑

82. सुन मेरे मन

सुन सुन सुन
सुन मेरे मन
सुन
सुनता रह।
धुन धुन धुन
धुन मेरे मन
धुन
धुनता रहा।
बन जा पिजारा
कर ध्यान उसका
पीन पीन नाम उसका
चुग ले उसमें
अदृश्य सत्ता का बीज।
धुन धुन रमा दे मन को
उसमे
कर ले उससे एकाकार
वही तो तेरा
सच्चा साथी है।
बन जा उसी का
भूल जा
इस नश्वर जीवन के
रिश्तों को

मत रो
मत कर इनसे
इतना मोह
यह माया जाल है
नर ककाल का
ये सब अपने अपने हैं।
तू तो अकेला आया था
अकेला जायेगा
उसी के पास
जिसका तू अश है
यदि तू उससे जोडेगा नाता
नहीं तो पडा
भोगता रहेगा
सडता रहेगा
इसी नश्वर जीवन मे
लेने जन्म बार बार
और पाता रहेगा दु ख
जिसे तू समझ बैठा है सुख।
आनन्द तो तुझे मिलेगा
पीनने पर उसके नाम को
रम जाने पर उसमे
जो सत्
चित्त
और आनन्द है।

❑❑❑

83. सहारा तो देती है

मन की उदासी
मुझे वार बार कचोटती है
पर जीने का सहारा तो देती है।
मैं डूबकर भी तैरता हूँ
अन्दर की परतो को खोल खोल
बिखेर देता हूँ
खुले आकाश के नीचे।
उदासी ही मुझे चेतना देती है
क्रोध-अग्नि की लपटे भी
मुझे जला नहीं पाती है
झकझोर शान्त हो जाती है।
उदासी की निश्चिन्तता
मुझे लक्ष्य देती है
शान्त शिथिल कर
स्फूर्ति फूँकती है
मैं उदास नहीं होता
रोने का मन भी नहीं करता
रो भी नहीं पाता
गमगीन भी तो नहीं हूँ
निढाल उसकी याद मे
असहाय लेटा पडा रहता हूँ।
उसकी याद ही तो मेरा सहारा है

जो मेरे सामने अतीत की परते
खोल खोल रख
मुझे उन रंगीनियों मे
ले जाती है
आज भी उसका अहसास करती है
वह मौज मस्ती देता है।
पर यादे तो यादे हैं
झट झोंके से खटके से ठसकी लहरे
समाप्त हो जाती है
और मैं उदास हो
गमगीन हो जाता हूँ
भूलकर जग जाता हूँ
अगोर हो जाता हूँ
उससे मिलने
छोडता चाहता हूँ
इस नश्वर जीवन को
उसके साथ बसने के लिए

❑❑❑

84. जीना सीखो

मैं तेरा अपना हूँ
तुझको चाहता हूँ
मैं तेरे से डरता हूँ
कहीं हो जाये नहीं तू नाराज
'मूड' न खराब कर ले
फिर भी कर बैठता हूँ
अपनी मनमानी।
सोच ही का तो फरक है
पर सब होता है अनजाने मे
न चाहते हुए भी
बह जाता हूँ हवा के झोके के साथ
अचानक मन मे आए भाव से
विचार से
समझ से।
पर इसमे मेरा क्या कसूर
तू क्यो इसको इतना लेती हे
उद्वेलित होती है, क्रोधित भी
मेरा मन फिर भर जाता है
ग्लानि से
पश्चाताप से
रोने लग जाता है
अन्दर ही अन्दर।

पर कर क्या सकता हूँ ?
ये सब कार्य कलाप तो
जीवन के
साधारण अशमात्र है
एक दिन के, कुछ पल के
क्यो इन्हे इतना गम्भीर लेते हो।
सहज भाव से जीना सीखो
अपने अन्दर झाँको
उसका ध्यान करो
फिर देखो
आनन्द ही आनन्द है।
मैं भी और प्रयत्न करूँगा
पर छोटी छोटी बाते
भूलने के लिए हे
न कि अपने अन्दर
गाठ बाँधने के लिए
जीवन के सत्य को समझो, पहचानो
फिर देखो
चखो मजा उसका
आनन्द ही आनन्द है।

□□□

85. सुनता नहीं गुनता

मेरा मन
क्या कहता ?
मैं सुनता,
सुनता नहीं,
गुनता
गुन गुन कर
पीस-पीस कर
चूर्ण बना
खाकर
सोचता रहता
करता रहता
नाचता रहता
उसके इशारे पर
चला जाता
जहाँ वह
ले जाता
डूब कर
उसके रस मे
पागल हो
लौट आता
पगला जो गया मैं
उसके नाम मे

उसके ध्यान मे
पर
पता नहीं
कब समाऊँगा
मैं
उसमे
निराकार
निर्गुण मे ?

□□□

86. डूब उसमें

तड़पने दो इन्हें
रोने दो
फड़फड़ाने दो
मत देखो
तन का साथ
जब तक था
नहीं चलता
मन के साथ
मिला के
हाथ में हाथ।
बनाओ मन को
दृढ़
पारदर्शी
करो उसे
बाध्य
लगाने टकटकी
उसकी ओर
जिसका अंश
अन्तर्मन में
छिपा
देख रहा
उसे

भोचक्का
नि सहाय
करता जब
तू
अपनी
मनमानी
डूब
इस ससार की
वीथियो मे
रगीनियो मे
कामुकता से लिपटा
अर्थों के अट्टहास मे
अर्थहीन
नजारो मे
भोग विलास के
कुकर्मो मे।
पर अब तो जागो
करो मन पर
नियन्त्रण
ओर बना लो
तन का भी
अगा रगधी
डूब उसम
लगा रट
उसकी
जो छिपा बठा है।
तुम्हारे अन्दर
सबके अन्दर।

□□□

87. अमृत दुग्ध

जिनमें
तुमने
माँगा था
यह संसार
भूल गये
वे
बिछुड गये
तुम
रह गया
सूना सूना
बिखर गया
यह संसार।
मत रोओ
मत सोचो
उन
बीते दिनों की
यादों को
भुला दो
उनको
अपने का
और
बसा दो

अपने राम मे।
उठा लो
उसे
अपनी गोदी में
बना लो उसे
अपना
नन्हा बालक
लगा छाती से
और पिलाओ
अन्तर्मन की
राग से
ओतप्रोत
रस भरा
अपना
अमृत दुग्ध।
फिर देखो
उस अपार
अद्‌भुत
दृश्य को
अपने अतर्चक्षु से
और पाओ
आनन्द ही
आनन्द।

❑❑❑

88. होने एक

भीगी पलकों में
संजोये
सपने
मधु-रस के
दूर होते
अपनों से
पहुँच जाने
नए अपने के पास
मिलन की वेला
जो
बड़ी मुश्किल से
आई थी
खुदा की
रहनुमाई थी।
खुदा ने चाहा तो
आ गए अपने देश में
होने एक
इस मिट्टी से
और अपने से
अंकुरित करने
नए पुष्प-फल को
और सिंचित करने

नई लता को
रोपित करने
नए वृक्ष को
जो चक्र से हट
पहुँचेगा उसके
असीम के पास
जो घुमा रहा
सबको अपने चक्रो मे।

□□□

89. मिलन की तडप

बीते दिनो की
यादो की
झुरमुट की
छाया
रीती रातो की
काली घटाओ की
बिजली की
साया
दिखाती
दूज के चाँद की
चमकती ललक।
ओढ शाल
उसका
उड
पहुँच जाता में
झपकते ही पलक
उस अदृश्य
के पास
अतीत के
अधियारे मे
तडित की
सूनी चमक से

पारकर
सुनसाने
वीराने
कटीले पथ को
मिलन की
तडप
जो घुल गई
मेरे सीने मे
और
फैल गया
जिसका विष
पूरे शरीर मे
छोडने
इस लोथडे को
और
सुरा-पान करा
मिला लेने
अपने मे।

❑❑❑

90. मिला दो मुझे

मिला दो मुझे
उस अजनबी से
जिसे ढूँढकर भी
चहुँ ओर
देख न पाया
ढूँढता रहा उसे
सागर की लहरो मे
उसकी गहराई मे
सूर्य किरण की
लाली मे
इन्द्रधनुष की
बहुरगी
हरियाली मे
वृक्ष की कोपलो मे
नव पुष्पित
फूलो की
मधुर सुगन्ध मे
बहती हवा के साथ
दूर आकाश मे
सूर्य के पार
आकाश गगा के
अनगिनत तारो में

शून्य मे
पर न पा सका
उसका ठोर
उसका पार
केवल सुन सका
उसकी आशीप
जब हो गया
समर्पित उसमे
उसके नाम मे
ओर भूल गया
अपने को
अपनी सुधबुध को
रम गया उसमे
एक होने के लिए
उसके साथ
फिर क्या था
वह आ गया
मेर सामने
ओर उठा लिया
उसने मुझे
अपनी गोदी मे
हो गया
फिर एकाकार
मिट गया मैं
ओर सिमिट गया
उसके साथ
फलने
समूचे ब्रह्माण्ड मे।

× × ×

देखो अपने अन्दर
न कि
ऊँचे आसमान मे
तभी पा सकते हो
पार उसका
भूल अपने को
समर्पित हो उसमे
टकटकी लगा
उसकी ओर
जहाँ छिपा बैठा
वह चित्तचोर
तुम्हारे अन्दर
सबके अन्दर।

❑❑❑

नश्वर लोक मे
विलाप कर रहे
मोह पाश मे बधे
वे सब
जिन्होने समझ बैठा था
इस पुतले को
अपना।
क्यो रोते हो
क्यो बिलखते हो
डूबे विषाद मे
मृत्यु तो
जीवन का
सत्य है
इस नश्वर शरीर का
आत्मा तो अमर है
ओर बिरले ही
पहचानते
उस सत्य को
जब देख लेते
अपने अन्दर
और पहचानते
उस असीम को
जो छिपा बैठा
अन्दर ही अन्दर
हिला रहा

सबको
अपनी डोर से
तभी तो तुम
समा रहे
ब्रह्माण्ड मे
तत् त्वम् असि।

अन्तर्ध्वनि

''कविता आत्मा की भाषा है
अन्तर्मन से निकली आवाज है। मेरे
कविता व्यस्तता के बीच का 'बाई प्रोडक्ट
नहीं ह, बल्कि आतरिक विवशता है।
इस प्रकार की मानसिकता को
देने मे अन्तर्ध्वनि की कविताएँ हम
देती हैं, चौंका देती हैं। कवित
ऐसी हैं जो आपसे बतियाते हुए
एक अद्भुत लोक म ले जाती हैं-
ईमानदारी ओर साफगोई के साथ।
कविताओ मे न तो कहीं कोई आरोपण है
न प्रदर्शनी वृत्ति, अपितु है तो यह कि
कविताएँ आपके सोये हुए चैतन्य
झकझोर कर जगा देती हैं।
जगाय। इनम आत्मा की ध्वनि
को तो सुनाई देती रही है, अब पाठक
सुन पायगे। वे परिचित हाग अत
की उन लहरो स जिनसे परिचय कभी
कभार ही होता है। मिथ्या को सत्य
रूप मे परिभाषित करने वालों के
कविताएँ भाषा की सहजता
के कारण निश्चय ही अमृतवर्षा करेगी
ऐसा विश्वास है।